भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन मंच का मुखपत्र

वर्ष - 1, अंक - 1, सितम्बर 2013

राष्ट्रीय कायाकल्प

(हिन्दी-त्रैमासिक)

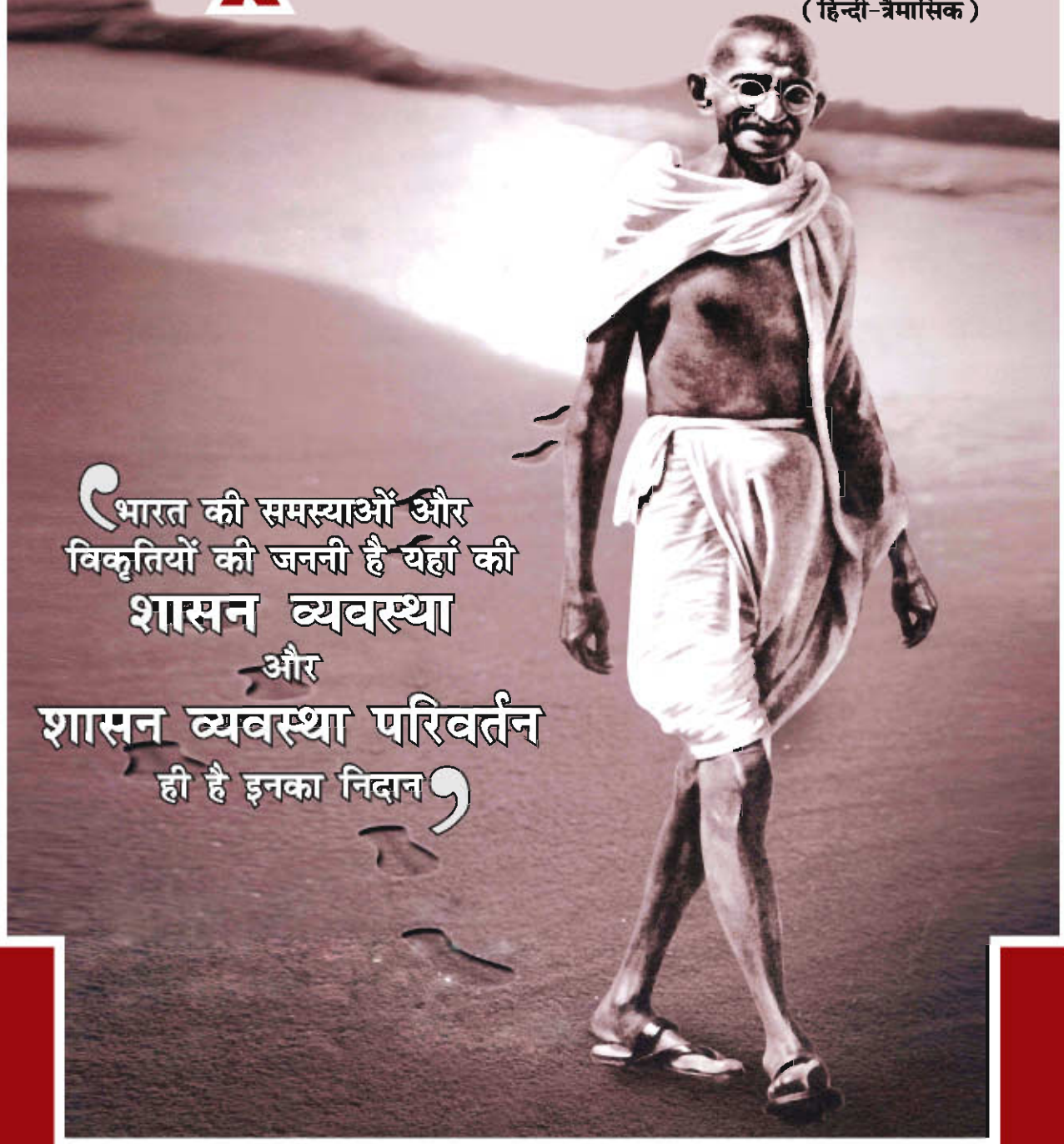

"भारत की समस्याओं और
विकृतियों की जननी है यहां की
शासन व्यवस्था
और
शासन व्यवस्था परिवर्तन
ही है इनका निदान"

यदि अंग्रेज भारत से चले गए और इसी शासन व्यवस्था को रखते हुए इसके संचालक भारतीय हो गए तो देश की दुर्दशा सुनिश्चित है।

[1908 में महात्मा गाँधी लिखित पुस्तक 'हिन्दी स्वराज' में इंगित चेतावनी]

भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन मंच
का मुखपत्र

राष्ट्रीय कायाकल्प

वर्ष-1, अंक-1, सितंबर 2013

संपादक
डा. त्रियुगी प्रसाद

संपादन सहयोगी
राजेश शुक्ल

सहायक संपादक
बिपेन्द्र

सहयोग राशि

प्रति अंक रु. 30.00
व्यक्तिगत वार्षिक रु. 110.00
संस्थागत वार्षिक रु. 150.00

संपर्क
173 बी, श्रीकृष्णपुरी
पटना 800001
टेलीफोन : 0612-2541276
email: rashtriyakayakalp@gmail.com

मुद्रक
वातायन, फ्रेजर रोड, पटना
फोन- 0216-2222920

प्रारंभण अंक

महात्मा गाँधी को समर्पित 2
संपादकीय 4
आह्वान और अपील 25

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद: एक विडंबना 14

भारत की संवैधानिक आकांक्षाएँ कितनी पूरी, कितनी अधूरी

जनता की आकांक्षाएं एवं अपेक्षाएँ न सिर्फ अधूरी हैं बल्कि मौजूदा व्यवस्था में उनके कभी पूरे होने के आसार नहीं हैं। राजनीति का नैतिक अधोपतन, भ्रष्टाचार, गरीबी और गरीब-अमीर के बीच की बढ़ती खाई तथा सामाजिक अशांति जैसी कई विकृतियाँ लगातार बढ़ती गई हैं। अतः यह निष्कर्ष भी सुनिश्चित है कि हमारा गणतंत्र रास्ता भटक चुका है। 6

भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन क्यों, क्या और कैसे

महात्मा गाँधी के आह्वान पर करोड़ों भारतीयों द्वारा स्वतंत्रता संग्राम में बलिदान देना, जयप्रकाश के नारा 'सत्ता परिवर्तन नहीं, व्यवस्था परिवर्तन' पर 25 साल से अधिक दिनों से जमी हुई सरकार को उखाड़ फेंकना और राजीव गाँधी द्वारा एक आधुनिक भारत के निर्माण की संभावना को साकार करने के लिए अभूतपूर्व बहुमत से उन्हें जिताना- जैसी ऐतिहासिक घटनाओं के घटित होने के बाद भारत के लोगों की अद्वितीय समझ में किसी को कोई संदेह नहीं होना चाहिए। 10

परिवर्तित शासन व्यवस्था में भारत का स्वरूप

परिवर्तित शासन व्यवस्था में विकास की धारा दिल्ली और राज्यों की राजधानियों से चलकर गांवों या शहरों में क्रमशः क्षीण होती हुई नहीं आएगी, बल्कि यह धारा गांव या शहर में ही प्रस्फुटित होगी। 15

भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन अभियान और विचार मंच 20

संपादक, प्रकाशक, मुद्रक डा. त्रियुगी प्रसाद द्वारा 173 बी, श्रीकृष्णपुरी, पटना 800001 से प्रकाशित एवं वातायन मीडिया एण्ड पब्लिकेशंस प्रा.लि., अयोध्या अपार्टमेंट, फ्रेजर रोड, पटना में मुद्रित

महात्मा गाँधी को समर्पित

दक्षिण अफ्रीका के अपने प्रवास के बाद महात्मा गांधी ने 1915 में भारत लौटकर देश की सेवा में अपने को समर्पित करने का व्रत लिया। उन्होंने सबसे पहले देश के कोने-कोने में भ्रमण कर और लोगों से मिलकर उनकी दयनीय दशा को प्रत्यक्ष रूप से देखा और अनुभव किया। अपने इस अनुभव के आधार पर वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि देश और इसकी जनता, उन पर थोपी गई उस शासन व्यवस्था के शिकार हैं जिसे अंग्रेजों ने प्रचुर संसाधन एवं समृद्ध सभ्यता और संस्कृति से संपन्न एक उपनिवेश का लंबे समय तक व्यवस्थित रूप से शोषित करने के लिए बनाई थी। इस शासन व्यवस्था की विशेषता ही थी शोषण निपुणता और इसे चिरस्थाई बनाने के लिए लोगों का सांस्कृतिक ह्रास और नैतिक पतन। उनकी दृढ धारणा थी कि जब तक इस शासन व्यवस्था से देश को मुक्त नहीं किया जाएगा, इस देश और जनता का उद्धार संभव नहीं है। देश में पहले से चल रहे मध्यमवर्गीय आंदोलन में जब महात्मा गांधी सक्रिय हुए और धीरे-धीरे अपनी सूझ-बूझ और अलौकिक व्यक्तित्व के बल पर जब इसके नायक बन गए तो देश की यही मुक्ति स्वतंत्रता आंदोलन का मुख्य उद्देश्य हो गया। उस शासन व्यवस्था को संचालित करने वाले अंग्रेजों से उनकी खिलाफत नहीं थी। वे तो उस व्यवस्था के तहत काम करते थे जिसका शिकार यह देश और जनता थी। चूंकि सात समुंदर पार से आए अंग्रेजों का निहित स्वार्थ इसी शासन व्यवस्था में था, इस कारण इस शासन व्यवस्था से मुक्ति के लिए देश की राजनीतिक स्वतंत्रता अनिवार्य थी। महात्मा गांधी की अनुप्रेरणा और आह्वान पर भारत के लाखों-करोड़ों लोग प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इस अहिंसक स्वतंत्रता आंदोलन में शरीक हुए और बलिदान दिया। अंततः 15 अगस्त 1947 को भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता मिली और शोषणकारी एवं नैतिक अधोपतन करने वाली शासन व्यवस्था से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त हुआ। यह मार्ग था भारत का संविधान निर्माण, जिसकी प्रक्रिया ब्रिटिश शासन के दौरान ही शुरू की जा चुकी थी। कुछ शक्तियों और तत्वों के निहित स्वार्थ, गांधी जी के शीर्ष

15 अगस्त 1947 को भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता मिली और शोषणकारी एवं नैतिक रूप से पतित शासन व्यवस्था से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त हुआ। यह मार्ग था भारत का संविधान निर्माण, जिसकी प्रक्रिया ब्रिटिश शासन के दौरान ही शुरू हो चुकी थी। कुछ शक्तियों और तत्वों के निहित स्वार्थ, गांधी जी के शीर्ष अनुयायियों का भी उनके विचार और आदर्श में अपूर्ण आस्था और सबसे ऊपर नियति का कुछ ऐसा दुर्योग रहा कि भारतीय संविधान में भी मूलतः वही शासन व्यवस्था अपना ली गई जिससे मुक्ति भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का मुख्य उद्देश्य था।

गाँधी तो हमारे सम-सामयिक हैं। 30 जनवरी 1948 को बहा उनका खून तो हमारी चेतना की रगों में संभवतः आज भी प्रवाहित होकर हमें उद्वेलित कर रहा है। उनके विचार आज भी जीवंत हैं। भारतीय शाासन व्यवस्था परिवर्तन का यह अभियान उन्हीं से अनुप्रेरित है। वे हमारे युगनायक हैं। भारतीय शाासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच का मुख पत्र 'राष्ट्रीय कायाकल्प' का प्रारंभण अंक उन्हीं को समर्पित है

अनुयायियों का भी उनके विचार और आदर्श में अपूर्ण आस्था और सबसे ऊपर नियति का कुछ ऐसा दुर्योग रहा कि भारतीय संविधान में भी मूलतः वही शासन व्यवस्था अपना ली गई जिससे मुक्ति ही भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का मुख्य उद्देश्य था। इस तरह संविधान निर्माण में महात्मा गांधी के विचारों की उपेक्षा की गई, स्वतंत्रता आंदोलन के लाखों सेनानी और बलिदानी ठगा सा महसूस करने लगे, देश की स्वतंत्रता अधूरी रह गई और करोड़ों जनता, जो सदियों की गुलामी से मुक्त होने की आशा में थी, निराश हो गई। विडंबना यह है कि हम उस संविधान द्वारा परिभाषित गणतंत्र को ही अपनी चिर आकांक्षित स्वतंत्रता समझते रहे। 63 सालों से अधिक गणतंत्र की अपनी यात्रा में जब देश में भ्रष्टाचार और अन्य विकृतियां उभरती और विकराल होती चली गईं तो हम आश्चर्य करने लगे कि क्या यह वह स्वतंत्रता है जिसके लिए अहिंसक संग्राम में भाग लेने के लिए महात्मा गांधी ने देशवासियों का आह्वान किया था और क्या यह वही स्वतंत्रता है जिसकी कामना में कविवर रवींद्र नाथ ठाकुर ने लिखा था-''उस स्वतंत्रता के स्वर्ग में मेरा देश जगे''।

इस संदर्भ में महात्मा गांधी की 1908 में लिखित ''हिंद स्वराज'' पुस्तक में व्यक्त की गई यह आशंका स्मरणीय है कि यदि अंग्रेज भारत से चले गए और इसी शासन व्यवस्था को रखते हुए इसके संचालक भारत के लोग हो गए तो देश की दुर्दशा सुनिश्चत है। संविधान निर्माण संबंधी गतिविधियों से हताश, देश के हिंसापूर्ण बंटवारे से मर्माहत, और संभवतः अपने महाप्रयाण के पूर्वाभास से ग्रस्त महात्मा गांधी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सभापति को संबोधित 29 जनवरी 1948 की रात में लिखे अपने जीवन के अंतिम पत्र और लेखन में सलाह दी थी कि राजनीतिक स्वतंत्रता के उपरांत देश में सामाजिक-आर्थिक स्वतंत्रता लाने के उद्देश्य से कांग्रेस के तत्कालीन स्वरूप को विघटित कर इसे ग्राम केंद्रित बनाया जाए। पता नहीं गांधी जी की इस वसीयत या इच्छा पत्र पर कोई विचार-विमर्श भी हुआ या नहीं, लेकिन कार्यरूप में तो यह पत्र उपेक्षित ही रहा। अपने निकट अनुयायियों में भी अपने दूरदर्शी मौलिक विचारों के प्रति आस्था का अभाव देखकर नियति में विश्वास रखने वाले आशावादी गांधी ने कहा था कि संभवतः उनके विचार तत्कालीन समय से काफी आगे के लिए हैं। वे रहें न रहें, समय आने पर उनके विचारों की सार्थकता और महत्ता स्वंय प्रकट हो जाएगी। अब जबकि देश की राजनीति मूल्य और सिद्धांत आधारित न होकर सिर्फ सत्ता केंद्रित हो गई है और राजनीतिक नैतिकता का घोर पतन स्पष्ट है, भ्रष्टाचार और व्यभिचार का बोलबाला हो गया है, गरीबी तथा गरीब-अमीर की खाई बढ़ती जा रही है और देश सामाजिक अशांति से आक्रांत हो गया है, विकट से विकटतर होती इन समस्याओं से जूझने के लिए हो रहे प्रयास और आंदोलन असफल साबित हो रहे हैं, इन समस्याओं से निजात पाने के लिए देश बेचैन और दिग्भ्रमित है, भारतीय शासन व्यवस्था संबंधित महात्मा गांधी के दूरदर्शी विचार आज सम-सामयिक हो गए हैं। ये विचार आज अंधकारपूर्ण लंबी सुरंग में प्रकाश की किरण की तरह दिख रहे हैं। देश जिन जटिल परिस्थितियों से जूझ रहा है, उनसे मुक्ति पाने के लिए देश को फिर एक गांधी की जरूरत है। लेकिन गांधी तो एक युग पुरूष थे। ''यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत, अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजम्या म्यहम्'' को चरितार्थ करते हुए आज से डेढ़ सौ साल से कम ही पहले गांधी अवतरित हुए थे। द्वापर युग के कृष्ण का महाभारत युद्ध में दिया गया गीता का संदेश आज भी लोगों का जीवन दर्शन बना हुआ है, और करोड़ो अर्जुनों का मोहजनित दिग्भ्रम का निवारण कर रहा है। फिर गांधी तो हमारे सम-सामयिक हैं। 30 जनवरी 1948 को बहा उनका खून तो हमारी चेतना की रगों में आज भी प्रवाहित होकर हमें उद्वेलित कर रहा है। उनके विचार आज भी जीवंत हैं। भारतीय शाासन व्यवस्था परिवर्तन का यह अभियान उन्हीं से अनुप्रेरित है। वे हमारे युगनायक हैं। भारतीय शाासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच का मुख पत्र ''राष्ट्रीय कायाकल्प'' का प्रारंभण अंक उन्हीं को समर्पित है।

संपादक की कलम से

संपादक परिचय:

डा. त्रियुगी प्रसाद इंजीनियरिंग में पटना विश्वविद्यालय से स्नातक, रुड़की विश्वविद्यालय (संप्रति रुड़की आइआइटी) से स्नातकोत्तर तथा इलिन्वॉय विश्वविद्यालय (अमेरिका) से पीएचडी की डिग्री हासिल करने के बाद पटना विश्वविद्यालय में अध्यापक बने। अध्यापन के अलावा जल संसाधन अध्ययन संबंधी शोध में वह काफी सक्रिय रहे। उनके प्रयास से पटना विश्वविद्यालय अंतर्गत जल संसाधन अध्ययन केंद्र स्थापित हुआ, जिसके अपनी अवकाश प्राप्ति तक (1999 अक्तूबर) वे संस्थापक निदेशक रहे। उन्होंने हार्वर्ड विश्वविद्यालय (अमेरिका) और मॉस्को विश्वविद्यालय (रूस) से जलसंसाधन के क्षेत्र में उच्च शोध का अनुभव और विशिष्ट प्रशिक्षण प्राप्त किया। डा. प्रसाद छात्र जीवन से ही देश की दशा और दिशा में गहरी रुचि लेते रहे हैं। पटना विश्वविद्यालय के प्रथम छात्र यूनियन में बिहार कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग के प्रतिनिधि थे। इलिन्वॉय विश्वविद्यालय (अमेरिका) में भारतीय छात्र संघ के अध्यक्ष निर्वाचित हुए थे। पटना विश्वविद्यालय में अपने सेवाकाल में शिक्षण, शोध और संबद्ध कार्यों में व्यस्तता के चलते इस क्षेत्र में गहरी रुचि के बावजूद अधिक समय नहीं दे सके। अब अवकाश प्राप्ति के पश्चात् इस क्षेत्र में सक्रिय होकर राष्ट्र की सेवा में जुटे हैं।

औपनिवेशिक भारत का इतिहास लगभग एक शताब्दी का रहा है। भारत औपचारिक रूप से 1858 में अंग्रेजी साम्राज्य का उपनिवेश बना था। उस समय से लेकर 15 अगस्त 1947 को आजादी मिलने के समय तक भारत उपनिवेश बना रहा। इस औपनिवेशिक काल का इतिहास भारत के हजारों साल के इतिहास से महत्वपूर्ण ढंग से भिन्न और अद्वितीय है। केवल इसी ऐतिहासिक अवधि में भारत का सम्राट (या साम्राज्ञी) सात समुंदर पार रहता था। उसके अंदर भारतीय बनने की कोई कल्पना या इच्छा नहीं थी। यह सम्राट (या साम्राज्ञी) अपने देश ब्रिटेन की जनता द्वारा चुनी गई संसद के द्वारा राजकाज चलाता था। इस तरह पूरा भारत सात समुंदर पार के एक देश का गुलाम बन गया। फिर राजा और प्रजा का संबंध पालक और पालित, या रक्षक और रक्षित का न होकर शोषक और शोषित का बन गया। इस अपरंपरागत संबंध का उद्देश्य ही अपने हित में उपनिवेश के भौतिक तथा मानव संसाधनों तथा बाजार का शोषण करना था। इस दृष्टिकोण से भारत उनका सबसे प्रिय उपनिवेश था।

भारत न सिर्फ भौतिक संसाधनों से समृद्ध देश था, बल्कि भारतवासी संस्कृति और आध्यात्मिकता के भी धनी थे। एक ऐसे विशाल देश को सात समुंदर पार बसे एक छोटे देश द्वारा लंबे समय तक शोषित करते रहना निस्संदेह एक चुनौती रही होगी। लेकिन ब्रिटिश शासकों ने बुद्धिमत्तापूर्वक इस चुनौती का सामना किया। उन्होंने भारत में एक ऐसी शासन व्यवस्था स्थापित की, जो न सिर्फ शोषण में कुशल थी, बल्कि शोषण को स्थाई बनाने के लिए भारत के लोगों का नैतिक अधोपतन भी सुनिश्चित करती थी। ऊपर से लगता था कि कानून का राज स्थापित हो गया है, सब कुछ कानून के अनुसार चलता है। भारत के लोग भी न सिर्फ कानून के इस राज को चलाने में भागीदार बनना आपत्ति या अपमान की बात नहीं मानने लगे, बल्कि ऐसा करने में वे गर्व भी महसूस करने लगे थे। सवाल यह था कि यह कानून कौन बनाता था, किसके लिए बनाता था और किस

मकसद से बनाता था। गांधीजी का अहिंसक असहयोग आंदोलन इसी युगदृष्टि पर आधारित था। 1921-22 में उनकी पत्रिका **यंग इंडिया** में छपे उनके तीन आलेखों के लिए मार्च 1922 में जब उन पर देशद्रोह का मुकदमा चला तो उन्होंने ब्रिटिश जज के सामने अपने बयान में कहा था, ''आप जिस कानून का प्रतिपालन सुनिश्चित करने के लिए जज की कुर्सी पर बैठे हैं, उस कानून के अनुसार मैं देशद्रोह का कसूरवार हूं और उसकी निर्धारित सजा भुगतने को भी तैयार हूं। लेकिन मैं इस देश को आर्थिक और राजनीतिक रूप से अशक्त बनाने वाले इस कानून को नहीं मानता। मैं जिस कानून को मानता हूं, उसके अनुसार मेरे आलेख देश की बहुत बड़ी सेवा है।''

बहुत लोग कहते हैं कि अंग्रेजी शासनकाल में भारत में रेलवे, पोस्टल सेवा, नहर आदि का सराहनीय विकास तो हुआ। लेकिन सच्चाई यह है कि यह विकास तो शोषण आधारित व्यवस्था का ही अंग था। यह ठीक उसी तरह था, जिस तरह बलि देने के लिए पशुओं को पराधीन बनाकर ठीक तरीके से खिलाना-पिलाना बलि की अभीष्ट नीति समझी जाती है। इस तरह औपनिवेशिक शासकों द्वारा थोपी गई शासन पद्धति के माध्यम से भारत व्यवस्थित ढंग से राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक रूप से जर्जर बनता गया। जर्जरता की इस जड़ को उखाड़ फेंकने के लिए ही महात्मा गांधी के प्रेरणादायी नेतृत्व में स्वतंत्रता संग्राम जनता की व्यापक भागीदारी के साथ संचालित हुआ था। राजनीतिक स्वतंत्रता इस आंदोलन का पहला आवश्यक पड़ाव था। लेकिन इस पड़ाव पर सफलतापूर्वक पहुंचने के बाद देश मानो एक नियति नियोजित झंझावात में फंस गया। एक ओर देश का बंटवारा हुआ, सांप्रदायिकता का तांडव नृत्य शुरू हो गया, जानमाल की व्यापक क्षति हुई और अभूतपूर्व पैमाने पर लोगों का पलायन और विस्थापन हुआ। दूसरी ओर, स्वतंत्रता के नायक महात्मा गांधी को संदर्भहीन कर दिया गया, औपनिवेशिक शासन व्यवस्था के लाभुक वर्गों का निहित स्वार्थ हावी हो गया, और महात्मा गांधी के शीर्ष अनुनायियों ने भी उनके दूरदर्शी और क्रांतिकारी विचारों की अनदेखी शुरू कर दी।

इस झंझावत को झेलता हुआ भारत एक ऐतिहासिक भूल कर बैठा। जब हम शोषण और आत्मविध्वंस पर आधारित ब्रिटिश शासन व्यवस्था को हटाकर अपने संविधान द्वारा स्वतंत्र भारत के लिए अपनी आकांक्षाओं, प्रतिभा, और संस्कृति के अनुरूप एक नई शासन व्यवस्था अपना सकते थे, हमने मूलतः वही व्यवस्था अंगीकार कर ली जो हमें शोषित और जर्जर कर रही थी। जिस तरह लंबी अवधि तक पिंजड़े में रहने वाला पक्षी उड़ना भी भूल जाता है, और पिंजड़े का द्वार खुलने के बाद भी उसे पालतू बनकर पिंजड़े में रहना ही श्रेयस्कर लगने लगता है, ठीक वैसी ही हालत हमारे रहनुमाओं की भी हो गई। हमारे संविधान की प्रस्तावना में खुले गगन में उड़ने की सदियों से दबी आकांक्षा को तो बखूबी व्यक्त किया गया, लेकिन इसने हमारे पंखों को गुलामी की उसी व्यवस्था से जकड़कर अशक्त और बोझिल बना दिया। गणतंत्र भारत में अनुभव की जा रही सारी समस्याएं, यथा - राजनीति का नैतिक अधोपतन, व्यापक भ्रष्टाचार, गरीबी और गरीब-अमीर की बढ़ती खाई तथा सामाजिक अशांति और अंतर्विद्रोह इसी व्यवस्था के स्वाभाविक परिणाम हैं।

आज जो हमारी स्थिति है उसके मूल में भी हमारी शासन व्यवस्था ही है, जिससे देश औपनिवेशिक शासनकाल में भी अभिशप्त था और आज गणतंत्र भारत में भी है। लेकिन हजारों वर्षों की सभ्यता और संस्कृति समाहित किए हुए इस देश को एकाध सदियों की विकृति सदा के लिए नहीं अभिशप्त कर सकती। उच्च संस्कारों से भारत की आत्मा अभी भी ऊर्जावान और जीवंत है। सिर्फ इसका शरीर रूग्ण हो गया है, जिसका मूल कारण हमारी शासन व्यवस्था है। इस रोग का रामबाण इलाज है शासन व्यवस्था परिवर्तन। यह परिवर्तन रूग्ण भारत का कायाकल्प कर देगा। ऐसा रोगमुक्त भारत फिर अपनी सभ्यता, संस्कृति और प्रतिभा के अनुरूप विश्व क्षितिज पर इस रूप में उदित होकर न सिर्फ समृद्धि की अपनी राह प्रशस्त करेगा, बल्कि विश्व में व्याप्त अशांति और अंधकार दूर करने में भी अपनी स्वाभाविक भूमिका निभाएगा।

राष्ट्रीय कायाकल्प का यही संदेश जन-जन तक पहुंचाने के लिए यह पत्रिका आज आविर्भूत हो रही है। आशा और विश्वास है कि यह भारत को सही रास्ते पर लाकर इसे अपने गंतव्य तक ले जाने में प्रभावशाली भूमिका निभाएगी।

- *त्रियुगी प्रसाद*

भारत की संवैधानिक आकांक्षाएँ
कितनी पूरी, कितनी अधूरी

महात्मा गांधी के प्रेरणादायी नेतृत्व में संचालित स्वतंत्रता संग्राम का लक्ष्य अंग्रेजों को हटाकर उनके द्वारा भारत में स्थापित शासन पर अपना कब्जा जमाना नहीं था। वास्तव में स्वतंत्रता संग्राम का मकसद भारत में एक ऐसी शासन व्यवस्था स्थापित करना था, जो यहां की जनता की आकांक्षाओं पर खरा उतरे और उन्हें पूरा करे। लेकिन 15 अगस्त 1947 को देश को जो आजादी मिली, वह सिर्फ सत्ता का हस्तांतरण था। वांछित शासन व्यवस्था स्थापित करने का लक्ष्य तो समुचित संविधान का निर्माण कर ही हो सकता था।

भारतीय संविधान निर्माण की प्रक्रिया अंग्रेजी शासनकाल में ही उन्हीं की योजना के अनुरूप शुरू कर दी गई थी। भारतीय संविधान सभा की पहली बैठक 9 दिसंबर 1946 को हुई थी। अंततः संविधान 26 नवंबर 1949 को पारित हुआ और 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। इस संविधान की प्रस्तावना में स्वतंत्र भारत में जनता की आकांक्षाएं स्पष्ट रूप से उल्लिखित हैं: **''हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न समाजवादी धर्म निरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए... इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।''** संविधान की यही आत्मा है। भारतीय गणतंत्र की 63 वर्षों की यात्रा और अनुभव के आधार पर यह देखना सार्थक होगा कि भारत के लोगों की ये आकांक्षाएं कितनी पूरी हुई हैं या अधूरी रह गई हैं तथा हमारे संविधान की आत्मा कितनी तुष्ट हुई है या नहीं हुई है या अतुष्ट रह गई है।

विचारणीय है कि अभी की व्यवस्था में क्या कार्य रूप में जनता और लोक सेवकों के पारस्परिक कार्य कलाप और संबंध में जनता की संप्रभुता आभासित या परिलक्षित है?
आजादी के बाद के 66 सालों का अनुभव तो यही दर्शाता है कि संविधान में घोषित 'संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न गणराज्य' अभी भी भारत में व्यवहार रूप में अवतरित नहीं हुआ है।

संप्रभुता

संविधान में उल्लिखित भारत के लोगों की पहली आकांक्षा है, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न गणराज्य बनाना। इसे समझने के लिए यह समझना जरूरी है कि यह संप्रभुता कहां निवास करती है। अंग्रेजी शासनकाल में यह संप्रभुता ब्रिटिश सम्राट या साम्राज्ञी में निवास करती थी, जो ब्रिटिश संसद के रास्ते भारत के वायसराय के माध्यम से भारत की ब्रिटिश सरकार के पास आती थी।

आजादी के बाद 26 जनवरी 1950 से यह संप्रभुता अब देश के आम आदमी में निवास करती है। विभिन्न संवैधानिक संस्थाएं इसी संप्रभुता से अपनी शक्तियां प्राप्त करती हैं और इन्हीं शक्तियों का इस्तेमाल करते हुए अपने दायित्वों का निर्वहन करती हैं। संसद और राज्यों में विधायिकाएं संप्रभुता संपन्न जनता से प्रतिनिधि के रूप में प्राप्त विधायी शक्तियों का उपयोग कर देश और राज्यों के विभिन्न कार्यों के संपादन हेतु कानून बनाती हैं। संविधान में प्रख्यापित शासन व्यवस्था के तहत बनाए हुए सरकारी तंत्र द्वारा इन कानूनों का कार्यान्वयन कर

विभिन्न कार्य संपादित किए जाते हैं। इन कार्यों के संपादन के लिए जनता ही प्रकारांतर से इस तंत्र में कार्यरत लोक सेवकों को समुचित अधिकार देती है और अपने करों से इस तंत्र और इसमें कार्यरत लोकसेवकों का संपोषण करती है।

अब विचारणीय है कि अभी की व्यवस्था में क्या कार्य रूप में जनता और इन लोकसेवकों के पारस्परिक कार्यकलाप और संबंध में जनता की संप्रभुता आभासित या परिलक्षित है? उदाहरण के तौर पर एक जिलाधिकारी और उस जिले की जनता का शासकीय संबंध देखें। अंग्रेजों के समय में जिलाधिकारी मूलभूत रूप से संप्रभुता संपन्न ब्रिटिश सम्राट या साम्राज्ञी से शक्ति और संपोषण प्राप्त कर उस जिले का कार्य संपादित करता था और तदनुसार उस जिले की जनता से शासकीय संबंध रखता था। मौजूदा समय में जिलाधिकारी को विभिन्न कार्यों के संपादन हेतु अंततः जनता से ही शक्ति और संपोषण मिलता है। लेकिन फिर भी जिलाधिकारी और जनता के बीच के शासकीय संबंध में कोई बुनियादी फर्क नहीं आया है। मतलब साफ है: संविधान में घोषित ''संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न गणराज्य'' अभी भारत में व्यवहार रूप में अवतरित नहीं हुआ है।

समाजवाद और धर्म निरपेक्षता

समाजवादी गणराज्य की स्थापना भारत के लोगों की दूसरी संवैधानिक आकांक्षा है। समाजवाद की भावना है कि जहां और जब व्यक्ति और समाज के हितों में विरोधाभास हो तो वहां व्यक्ति का हित गौण कर के समाज के हित को वरीयता दी जाए। 1991 में विदेशी भुगतान के विकट असंतुलन की परिस्थिति में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के दबाव में भारत ने आर्थिक सुधारों के नाम पर समाजवाद को तिलांजलि दे दी और इस तरह भारत के लोगों की संवैधानिक आकांक्षाओं और अपेक्षाओं की घोर अवहेलना हुई। आज भारत में अमीरी और गरीबी की बढ़ती खाई और हमारी संस्कृति को नकारता हुआ बाजारवाद का नंगा नृत्य इसी के परिणाम हैं।

संविधान में उल्लिखित धर्म निरपेक्षता हमारे देश की राजनीति में कभी अवतरित नहीं हो सकी है। अंग्रेजों के समय से चली आ रही ''बांटो और राज करो'' की नीति सत्ता केंद्रित वोट की राजनीति में बदस्तूर कायम है। अल्पसंख्यकों के प्रति तुष्टीकरण की नीति और बहुसंख्यकों की धार्मिक भावनाओं को उन्माद की सीमा तक ले जाकर राजनीति का ध्रुवीकरण राजनीतिक दलों की सुपरिचित रणनीति रही है। इतना ही नहीं, सच तो यह है कि इसमें इजाफा ही हुआ है। राजनीति के लिए समाज को बांटने की प्रक्रिया धर्म की सीमा से बढ़कर जाति तक तो पहुंच ही चुकी है।

यह ठीक है कि 26 नवंबर 1949 को पारित संविधान की प्रस्तावना में समाजवादी और धर्मनिरपेक्ष गणराज्य का उल्लेख नहीं था। 1976 में किए गए एक संशोधन के जरिए इन्हें संविधान में जोड़ा गया। लेकिन समाजवादी व्यवस्था और धर्मनिरपेक्षता भारत की जनता की सर्वमान्य मान्यता रही है और यह हमारी सभ्यता व संस्कृति का अंग भी है। हकीकत में हमारी सरकारी नीति, कार्यक्रम और क्रियाकलाप संविधान संशोधन के पहले भी इनसे स्पष्टतः प्रभावित रहे थे। यही कारण है कि संविधान संशोधन के जरिए संविधान की प्रस्तावना में इनका समावेश कभी विवादास्पद नहीं रहा।

लोकतंत्र

भारतीय गणतंत्र का लोकतंत्रात्मक स्वरूप सिर्फ हमारे संविधान में ही उद्घोषित नहीं है, बल्कि हम और हमारे नेता दुनिया के सामने गर्व से कहते हैं कि भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है।

1991 में विदेशी भुगतान के विकट असंतुलन की परिस्थिति में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के दबाव में भारत ने आर्थिक सुधारों के नाम पर समाजवाद को तिलांजलि दे दी और इस तरह भारत के लोगों की संवैधानिक आकांक्षाओं और अपेक्षाओं की घोर अवहेलना हुई। आज भारत में अमीरी और गरीबी की बढ़ती खाई और हमारी संस्कृति को नकारता हुआ बाजारवाद का नंगा नृत्य इसी के परिणाम हैं।

अंग्रेजों के समय से चली आ रही ''बांटो और राज करो'' की नीति सत्ता केंद्रित वोट की राजनीति में बदस्तूर कायम है। इतना ही नहीं सच तो यह है कि इसमें इजाफा ही हुआ है। राजनीति के लिए समाज को बांटने की प्रक्रिया धर्म की सीमा से बढ़कर जाति तक तो पहुंच ही चुकी है।

जो भी उम्मीदवार अपने प्रतिद्वंद्वियों से अधिकतम मत प्राप्त कर निर्वाचित होते हैं, वे साधारणतया अपने निर्वाचन क्षेत्रों के आधे से कम मतदाताओं का वोट प्राप्त करते हैं। उन क्षेत्रों के अधिकांश मतदाताओं के वोट निवार्चित उम्मीदवार के पक्ष में नहीं होते। बहुत सारे मतदाता तो किसी एक या दूसरे कारण से वोट देते ही नहीं। इस तरह आधे से भी कम वोट हासिल करने वाले उम्मीदवारों को लेकर लोकसभा और राज्यों की विधानसभाएं गठित होती हैं। इतना ही नहीं, बाद में जो सरकारें बनती हैं उनमें शाामिल दलों को प्राप्त वोटों का हिसाब लगाएं तो पाएंगे कि आम तौर पर अपवादों को छोड़कर इन दलों को कुल पड़े वोटों का आधा भी नहीं मिला होता है।

गणतंत्र की 63 वर्षों की यात्रा और अनुभव के बाद इस संवैधानिक उद्घोषणा और हमारी गर्वोक्ति की समीक्षा समीचीन है।

हमारा संविधान प्रत्येक बालिग नागरिक को वोट का अधिकार प्रदान करता है। इस अधिकार का इस्तेमाल हम साधारणतया पांच वर्षों में दो अवसरों पर करते हैं। एक, लोकसभा चुनाव के दौरान और दूसरा, अपने राज्य की विधानसभा चुनाव के दौरान। इनके लिए निर्धारित निर्वाचन क्षेत्रों से जो भी उम्मीदवार अपने प्रतिद्वंद्वियों में अधिकतम मत प्राप्त कर निर्वाचित होते हैं, वे साधारणतया अपने निर्वाचन क्षेत्रों के आधे से कम मतदाताओं का ही वोट प्राप्त करते हैं। उन क्षेत्रों के अधिकांश मतदाताओं के वोट निर्वाचित उम्मीदवार के पक्ष में नहीं होते। बहुत सारे मतदाता तो किसी एक या दूसरे कारण से वोट देते ही नहीं। इस तरह आधे से भी काफी कम वोट हासिल करने वाले प्रतिनिधियों को लेकर लोकसभा और राज्यों की विधानसभाएं गठित होती हैं। इतना ही नहीं, बाद में जो सरकारें बनती हैं उनमें शाामिल दलों के प्राप्त वोटों का हिसाब लगाएं तो पाएंगे कि आम तौर पर अपवादों को छोड़कर इन दलों को कुल पड़े वोटों का आधा भी नहीं मिला होता है।

और फिर सरकार के गठन में जनता की भागीदारी तो दूर, जनता पूरी तरह से अप्रासंगिक हो जाती है। सरकार गठन की प्रक्रिया में राजनीतिक दलों का जोड़-तोड़ हावी रहता है। हाल के वर्षों में तो यह प्रचलन भी बढ़ता जा रहा है कि केंद्र का मुखिया प्रधानमंत्री या राज्यों का मुख्यमंत्री वैसा व्यक्ति बन जा रहा है, जो जनता द्वारा सीधा निर्वाचित ही नहीं होता।

हकीकत यह है कि पांच सालों में एक बार वोट देने के बाद जनता का राजनीतिक महत्व या भूमिका नगण्य हो जाती है। लोकसभा या विधानसभाओं में कौन सा और कैसा कानून बनता है या उनके अपने क्षेत्र की समस्याओं पर समुचित सुनवाई या सरकार का ध्यानाकर्षण हो पाता है या नहीं, इन बातों को प्रभावित करने के लिए जनता के पास कोई प्रभावी लोकतांत्रिक माध्यम या अधिकार नहीं है।

केंद्र सरकार या राज्य सरकारों की गतिविधियों या कार्यकलापों से प्रभावित जनता को अपनी समस्याओं के निराकरण के लिए इन सरकारों की नौकरशाही से ही पाला पड़ता है। सिद्धांत में तो यहां ''कानून का राज'' है, लेकिन कई कारणों से जनता को नौकरशाही के मनमानेपन का सामना करना पड़ता है। इन कारणों में एक प्रमुख कारण है जनता और सरकार की दूरी। जनता का उत्पीड़न और भ्रष्टाचार इसी स्थिति की उपज है। इस लोकतंत्र में सरकार का दूरस्थ होना ही 'लोक'और 'सेवकों' के बीच असंगत संबंध का कारण है। इस लोकतंत्र का यह व्यवस्थागत दोष है। सरकार के कुछ संवैधानिक अधिकारी या पदाधिकारी 'जनता दरबार' लगाकर इस व्यवस्थागत दोष को मिटाने या कम करने का प्रयास करते हैं। लेकिन यह जनता दरबार एक तरह से राजशाही की प्रथा प्रतीत होती है। और फिर यह व्यवस्था परिवर्तन का विकल्प कतई नहीं हो सकता।

स्वतंत्रता प्राप्ति के 45 वर्षों के बाद 1992 में संवैधानिक संशोधन द्वारा पंचायती राज कानून लागू होने के बाद पांच सालों में एक बार त्रिस्तरीय पंचायती राज के विभिन्न निकायों के लिए जनता को वोट देने का अधिकार है। लेकिन पंचायती राज के विभिन्न निकाय केंद्र या राज्य सरकारों की तरह कोई स्वायत्त सरकार नहीं हैं। राज्य सरकारों के कुछ कार्यक्षेत्रों के कामों को संपादित करने की जिम्मेदारी पंचायती राज निकायों और विशेषकर पंचायतों को दी गई है। लेकिन इन कार्यों के संपादन के लिए आवश्यक आर्थिक और मानव संसाधन के लिए वे राज्य सरकारों पर निर्भर हैं। फिर, इनकी निगरानी, निलंबन और बर्खास्तगी का अधिकार भी राज्य सरकार को है। मतलब पंचायती राज में गांव, प्रखंड और जिला

स्तर पर राज्य सरकार के कुछ कार्यक्षेत्रों के काम अपने नौकरशाहों की जगह जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों को सौंप दी गई है। इन स्तरों पर राज्य सरकारों की नौकरशाही भी यथावत है, जिससे उत्तरदायित्वों में द्विविधता और अंतर्विरोध पनपा है। अत: ऐसे निकायों के लिए मतदान का अधिकार जनता की लोकतांत्रिक शक्ति में कोई विशेष वृद्धि नहीं करता।

अत: भारतीय गणराज्य का वर्तमान लोकतांत्रिक स्वरूप, जिसे संसदीय लोकतंत्र कहते हैं, असंतोषप्रद और छलावा भरा है। इसमें राजनीति सत्ता केंद्रित और फलत: विकृत हो गई है। राजनीतिक दल सिद्धांतविहीन हो गए हैं और जनता मात्र वोट बैंक बनकर रह गई है।

देश के भविष्य को प्रभावित करने वाली नीतियों के निर्धारण में जनता की कोई लोकतांत्रिक भूमिका नहीं है। साथ ही, जनजीवन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई समस्याओं, यथा - सड़क, बच्चों की पढ़ाई, जलापूर्ति, प्राथमिक स्वास्थ्य, स्वच्छता, विधि व्यवस्था आदि के संतोषप्रद निराकरण में जनता खुद को पूरी तरह असहाय महसूस करती है। या फिर बाजारवाद या मुनाफा की दृष्टि से संचालित निजी सेवा प्रदाताओं से शोषित होने के लिए या असंतोषप्रद सेवा लेने या सेवा से वंचित रहने को मजबूर है। इन सेवाओं से संबंधित केंद्र या राज्य सरकार संपोषित कई योजनाएं गांवों में चलती हैं, लेकिन इनमें जनता की कोई प्रभावी भागीदारी नहीं है।

गणतंत्र

संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित भारत के लोगों की एक और आकांक्षा है, भारत को गणराज्य बनाना। 26 जनवरी 1950 को भारतीय गणतंत्र के उदय के पूर्व भी उत्तर बिहार के वैशाली में केंद्रित लिच्छवी गणराज्य का उदाहरण हमारे सामने है। गणराज्य वह राज्य है, जिसका प्रधान वंशानुगत न होकर उस राज्य का कोई भी उपयुक्त व्यक्ति हो सकता है। इस शाब्दिक अर्थ के अनुसार भारत निस्संदेह रूप से गणराज्य है। लेकिन देश की मौजूदा राजनीति वंशानुगत होने से मुक्त नहीं है। देश के कई राष्ट्रीय और क्षेत्रीय दलों में वंश परंपरा बदस्तूर कायम है। लोकतंत्र को ''जनता के लिए, जनता के द्वारा और जनता का शासन'' कहा जाता है, लेकिन हमारा लोकतंत्र इससे काफी दूर है।

भारतीय गणतंत्र की 63 वर्षों की यात्रा के अनुभव से यह निष्कर्ष निश्चयपूर्वक निकाला जा सकता है कि संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित जनता की आकांक्षाएं एवं अपेक्षाएं न सिर्फ अधूरी हैं बल्कि मौजूदा व्यवस्था में उनके कभी पूरे होने के आसार नहीं हैं। इसके साथ ही स्पष्ट रूप से हम यह भी देखते हैं कि गणतंत्र की इस यात्रा के दौरान राजनीति का नैतिक अधोपतन, भ्रष्टाचार, गरीबी और गरीब-अमीर के बीच की बढ़ती खाई तथा सामाजिक अशांति जैसी कई विकृतियां लगातार बढ़ती गई हैं। अत: यह निष्कर्ष भी सुनिश्चित है कि हमारा गणतंत्र सही रास्ते पर नहीं है। ऐसे में समय के साथ हमारी समस्याएं विकराल से विकरालतर होती गयी हैं और होती जाएंगीं और जनता अपनी संवैधानिक आकांक्षाओं व अपेक्षाओं से दूर होती चली जाएगी। अत: जनता की यह करूण पुकार है कि भारतीय गणतंत्र को सही रास्ते पर लाया जाए। और यह काम सत्ता परिवर्तन से नहीं, व्यवस्था परिवर्तन से ही संभव है।

समर शेष है नहीं पाप का भागी केवल व्याध
जो तटस्थ हैं समय लिखेगा उनका भी अपराध

राष्ट्रकवि दिनकर

महात्मा गाँधी के नायकत्व में संचालित अनोखा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम न 15 अगस्त 1947 को और न ही 26 जनवरी 1950 को अपने उस लक्ष्य तक पहुँचा जिसकी उद्घोषणा महात्मा गाँधी ने की थी, जिससे प्रेरित होकर लाखों स्वतंत्रता सेनानियों ने बलिदान दिया था और जिसकी आकांक्षा उस समय से आज तक भारत की जनता करती रही है। भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन का यह अभियान उस आधी-अधूरी स्वतंत्रता को पूरी करने का, उसके फलस्वरूप विकृत भारत को स्वस्थ भारत बनाने का और एक रुग्ण राष्ट्र का कायाकल्प करने का अभियान है। हर भारतीय नागरिक इस अभियान में किसी-न-किसी रूप में, तन-मन-धन से, योगदान दे सकता है जो राष्ट्र के इस विकट और ऐतिहासिक क्षण में सर्वथा अपेक्षित है।

भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच
173 बी, श्रीकृष्णपुरी, पटना-800001
टेलीफोन : 0612-2541276
वेबसाइट : www.fcsgi.org, इमेल : rashtriyakayakalp@gmail.com

भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन
क्यों, क्या और कैसे

यदि हम एक लोकतांत्रिक सरकार को इस तरह परिभाषित करते हैं कि यह सरकार एक ऐसा संगठन है, जिसके निर्णायक पदाधिकारी जनता द्वारा निर्वाचित हों, जो उसी निर्वाचक जनता के प्रति उत्तरदायी हों, किसी और के प्रति नहीं, और जिसे अपने दायित्वों के निर्वहन के लिए पर्याप्त आर्थिक और प्रशासनिक स्वायत्तता हो, तो अमेरिका में वहां की संघीय सरकार द्वारा प्रकाशित सरकारों का सेंसस (Census of Governments) के अनुसार वहां 87,536 सरकारें, (एक संघीय सरकार, 50 राज्य सरकारें और 87,485 स्थानीय या विशेष उद्देश्यीय सरकारें) कार्यरत हैं। इस परिभाषा के अनुसार भारत में केवल 29 सरकारें (एक केंद्रीय और 28 राज्य सरकारें) हैं। भारत की अन्य सभी इकाइयां यथा बोर्ड, प्राधिकार, या पंचायती राज संस्था 'सरकार' नहीं हैं।

भारत की मौजूदा शासन व्यवस्था मूलत: वही है, जिसे अंग्रेजों ने अपने एक समृद्ध उपनिवेश को व्यवस्थित रूप से शोषण करने के लिए बनाई थी और यहां लागू की थी। सभ्यता और संस्कृति से संपन्न एक देश में ऐसी शोषण आधारित व्यवस्था निर्बाध रूप से अनवरत चलती रहे, इसके लिए यह भी जरूरी था कि उस शासन व्यवस्था में यहां के लोगों का नैतिक पतन भी सुनिश्चित किया जाय। इस तरह अंग्रेजों द्वारा भारत पर थोपी गई शासन व्यवस्था के दो उद्देश्य थे। पहला, एक ऐसी व्यवस्था जो इस देश के शोषण में निपुण हो और दूसरा, जो यहां के लोगों का नैतिक पतन सुनिश्चित करे।

1858 में ईस्ट इंडिया कंपनी से शासन की बागडोर अपने हाथों में लेने के बाद ब्रिटिश सरकार ने इन दोनों उद्देश्यों को पूरा कर सकने वाली शासन व्यवस्था स्थापित की। समय-समय जो स्थितियां उभरीं, समस्याएं आयीं और जो उनके अनुभव हुए, उनके आधार पर इसके मूल स्वरूप को बरकरार रखते हुए वे शासन व्यवस्था में बदलाव लाते रहे।

परिवर्त्तन क्यों

महात्मा गांधी के प्रेरणादायी नेतृत्व में संचालित स्वतंत्रता आंदोलन के मद्देनजर शासन व्यवस्था की संरचना में संशोधन करते हुए 1935 में गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट लागू किया गया था। इसमें राज्यों में जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा बनाई गई सरकार को कुछ कार्यक्षेत्रों का उत्तरदायित्व और अधिकार दिए गए। 1937 के चुनाव में स्वतंत्रता आंदोलन का अग्रणी राजनीतिक दल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को अधिकांश राज्यों में शानदार कामयाबी मिली और कांग्रेस की सरकारें बनीं। लेकिन कांग्रेस ने दो वर्षों के शासनकाल में ही अनुभव किया कि 1935 के इस कानून के प्रावधानों के तहत जनता के हित में कोई प्रभावकारी काम नहीं किया जा सकता। अत: कांग्रेस के नेतृत्व में बनी सभी राज्य सरकारों ने इस्तीफा दे दिया और कांग्रेस सरकार से अलग हो गई। अपने कटु अनुभव के आधार पर कांग्रेस ने उस समय कहा था कि स्वतंत्र भारत में इस तरह के कानून और इसमें प्रतिपादित शासन व्यवस्था का कोई स्थान नहीं रहेगा।

15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र होने के बाद भारत ने जब अपना संविधान बनाया तो संविधान की प्रस्तावना में जनता की आकांक्षाओं और अपेक्षाओं को तो बखूबी उल्लिखित किया गया, लेकिन विडंबना रही कि उन्हें सरजमीं पर लाने के लिए मूलत: 1935 के एक्ट में प्रतिपादित शोषण आधारित उसी शासन

व्यवस्था को अपना लिया गया जो नैतिक अधोपतन का संपोषण करती थी और जिसे देश से निर्वासित करने के लिए कांग्रेस प्रतिबद्ध थी।

दक्षिण अफ्रीका से लौटने और देश की दशा से रू-ब-रू होने के बाद महात्मा गांधी का स्पष्ट विचार था कि अंग्रेज रहें या जाएं, हमें अंग्रेजों की शासन व्यवस्था को हटाना है। उनके नेतृत्व में संचालित स्वतंत्रता संग्राम का यही मूलमंत्र था और इसी के लिए उनके आह्वान पर करोड़ों भारतीय आंदोलित हुए थे। इस आंदोलन के फलस्वरूप जब भारत से अंग्रेजों की विदाई सुनिश्चित हो गई तो ऐसे तत्व जो ब्रिटिश शासन व्यवस्था के लाभार्थी थे, और इसी व्यवस्था में उनका निहित स्वार्थ था, वे स्वतंत्र भारत में भी पुरानी व्यवस्था को ही लागू करने के पक्षधर थे। ऐसे लोगों में भारत के कुछ प्रभावशाली वर्गों के साथ-साथ निवर्तमान ब्रिटिश सरकार भी थी। महात्मा गांधी के कुछ शीर्ष अनुयायी भी कुछ इसी विचार के थे। इन सबों की चाल और इस रुख के कारण हमारे संविधान में एक ओर तो दुनिया के कई प्रगतिशील देशों के संविधानों के अनुरूप जनता की उच्च भावनाओं और अपेक्षाओं को संविधान की प्रस्तावना में प्रतिपादित किया गया लेकिन इनको फलीभूत करने के लिए एक सवर्था अनुपयुक्त और प्रतिगामी शासन व्यवस्था को अपना लिया गया। एक समय महात्मा गांधी ने आशंका व्यक्त की थी कि यदि स्वतंत्र भारत में भी यही शासन व्यवस्था रह जाती है तो भारत की दुर्दशा सुनिश्चित है। समय के साथ विकरालतर होती जा रही

15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र होने के बाद भारत ने जब अपना संविधान बनाया तो संविधान की प्रस्तावना में जनता की आकांक्षाओं और अपेक्षाओं को तो बखूबी उल्लिखित किया गया, लेकिन विडंबना रही कि उन्हें सरजमीं पर लाने के लिए मूलतः 1935 के एक्ट में प्रतिपादित शोषण आधारित उसी शासन व्यवस्था को अपना ली गयी जो नैतिक अधोपतन का संपोषण करती थी और जिसे देश से निर्वासित करने के लिए कांग्रेस प्रतिबद्ध थी।

भारत की विभिन्न समस्याओं, यथा - राजनैतिक नैतिकता का अधोपतन, भ्रष्टाचार, गरीबी और गरीबी-अमीरी के बीच की बढ़ती खाई, तथा सामाजिक अशांति और अंतर्विद्रोह की जड़ में यही शासन व्यवस्था है। इस व्यवस्था को बदले बिना इन समस्याओं का समाधान और देश का सर्वांगीण विकास संभव नहीं है।

परिवर्तन क्या

भारत की वर्त्तमान शासन व्यवस्था इस अवधारणा पर आधारित है कि सत्ता ऊपर से निकलकर नीचे की ओर आती है। औपनिवेशिक भारत में सत्ता का ऐसा ही प्रवाह शासित वर्ग के व्यवस्थागत शोषण और नैतिक अधोपतन के लिए वांछित था। लेकिन हमारे संविधान की मूल धारणा है कि संप्रभुता भारत के लोगों में सन्निहित है। इसके अनुसार सत्ता व्यक्ति से निकलकर ग्राम स्तर, राज्य स्तर, राष्ट्रीय स्तर या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी प्रवाहित होगी। सत्ता का यही ऊर्ध्वगामी प्रवाह सुनिश्चित करना शासन व्यवस्था परिवर्तन की मूल अवधारणा है।

महात्मा गांधी ने इसकी उपमा शांत झील में एक पत्थर फेंके जाने से उठने वाली तरंगों से की है। फेंके गए पत्थर की ऊर्जा व्यक्ति में सन्निहित संप्रभुता है, शांत झील समाज है और उस ऊर्जा से उत्पन्न तरंगें शासन के विभिन्न स्तर हैं- जो शासकीय शक्ति संप्रभुता संपन्न व्यक्ति से प्राप्त करते हैं। नजदीक की तरंग अधिक शक्तिशाली है, लेकिन उसका प्रभाव क्षेत्र कम है और दूर की तरंग कम शक्तिशाली है लेकिन उसका प्रभाव क्षेत्र अधिक विस्तृत है। ठीक इसी तरह व्यक्ति के सबसे समीप के समाज की इकाई गांव है और इस स्तर का शासनतंत्र सबसे शक्तिशाली होगा। इसी तरह राज्य, राष्ट्र या किसी और स्तर के शासनतंत्र होंगे । इस शासन व्यवस्था में शासन के विभिन्न स्तरों का एक दूसरे से ऊपर या नीचे होने की कोई अवधारणा नहीं है। सभी स्तरों के अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र और कार्य क्षेत्र तय हैं। सभी अपनी शासकीय शक्ति जनता से प्राप्त करते हैं। और शासन के इन विभिन्न स्तरों का अन्तर्सम्बंध संविधान में प्रतिपादित रहेंगे। ऐसी शासन व्यवस्था को विकेंद्रित व्यवस्था कहना पूर्णतः सही नहीं है, क्योंकि ऐसा लगता है कि इस व्यवस्था में केंद्रीयकृत शासकीय शक्ति को नीचे के कई केंद्रों में सौंप दी गई है। लेकिन इस शासन संरचना में शासन शक्ति व्यक्ति से निकलकर शासन के विभिन्न स्तरों पर क्रियाशील होती है। ऐसी शासन व्यवस्था को बहुस्तरीय और बहुकेंद्रित व्यवस्था कह सकते हैं।

स्वतंत्र भारत में महात्मा गांधी के ग्राम गणराज्य का विचार इसी अवधारणा पर आधारित है। लेकिन स्वतंत्रता के समय के नेता और महात्मा गांधी के शीर्ष अनुयायी भी प्रचलित शासन व्यवस्था से सुपरिचित थे और दूरद्रष्टा महात्मा गांधी के मौलिक विचारों को पूर्णत: समझने में असमर्थ थे। इन सबों ने यह कहकर महात्मा गांधी की अवधारणा को दरकिनार कर दिया कि ऐसी शासन व्यवस्था व्यावहारिक नहीं है। भारत का यह दुर्भाग्य था। उस समय भी और आज भी जो शासन व्यवस्था संयुक्त राज्य अमेरिका में है, वह वही शासन व्यवस्था है जो महात्मा गांधी स्वतंत्र भारत के लिए चाहते थे। अमेरिका की बहुस्तरीय और बहुकेंद्रित शासन व्यवस्था को हम इस तरह समझ सकते हैं। यदि हम एक लोकतांत्रिक सरकार को इस तरह परिभाषित करते हैं कि यह सरकार एक ऐसा संगठन है जिसके निर्णायक पदाधिकारी जनता द्वारा निवार्चित हों, जो उसी निर्वाचक जनता के प्रति उत्तरदायी हो, किसी और के प्रति नहीं, और जिसे अपने दायित्वों के निर्वहन के लिए पर्याप्त आर्थिक और प्रशासनिक स्वायत्तता हो, तो अमेरिका में वहां की संघीय सरकार द्वारा प्रकाशित सरकारों का सेंसस (Census of Governments) के अनुसार वहां 87, 536 सरकारें (एक संघीय सरकार, 50 राज्य सरकारें और 87,485 स्थानीय या विशेष उद्देश्यीय सरकारें) कार्यरत हैं। इस परिभाषा के अनुसार भारत में केवल 29 सरकारें (एक केंद्रीय और 28 राज्य सरकारें) हैं। भारत की अन्य सभी इकाइयों यथा बोर्ड, प्राधिकार, या पंचायती राज संस्था 'सरकार' नहीं हैं।

ऐसी शासन व्यवस्था के ही फलस्वरूप अमेरिका में राजनीतिक दल अभी भी अपने दर्शन, विचारों और नीतियों के आधार पर संचालित हैं, वहां भ्रष्टाचार नगण्य है, गरीबों की संख्या बहुत कम है और मध्यम वर्ग बहुत बड़ा है। अंतर्विद्रोह या अलगाववादी तत्व प्राय: नहीं हैं। दुनिया के बाकी देशों की तुलना में अमेरिका की समृद्धि के मूल में वहां की शासन व्यवस्था ही है। आज से करीब चार-पांच सौ वर्ष पूर्व दुनिया के पटल पर अमरिका का जिस तरह आविर्भाव हुआ, उसी में वहां इस तरह की शासन व्यवस्था अवतरित होने का शायद मर्म है। अपने देश की घुटनभरी एवं अवरोधात्मक माहौल से निकलकर अमेरिका जाने पर विभिन्न देशों के लोगों ने अपनी आकांक्षाओं को अपनी क्षमता के अनुरूप फलीभूत करने का,जैसे खुली हवा में साँस लेने का, भरपूर अवसर पाया। ऐसे लोगों ने पहले गांव या शहर तथा उसकी व्यवस्था का निर्माण किया। फिर राज्य बना और फिर राज्यों का समूह संयुक्त राज्य अमेरिका गठित हुआ। इसी विकास प्रक्रिया, यथा गांवों से राज्य और राज्यों से राष्ट्र, के अनुरूप वहां की शासन व्यवस्था बनी, जिसे अमेरिका के संस्थापकों और संविधान निर्माताओं ने देश और राज्यों के संविधानों में उल्लिखित किया। ऐसी आधारशिला पर बना यह राष्ट्र न सिर्फ विकास और समृद्धि के मार्ग पर सतत अग्रसर है, बल्कि इसमें योगदान की क्षमता वाले दुनिया के असंतुष्ट व्यक्तियों को आज भी आकर्षित कर रहा है।

परिवर्तन कैसे

गणतंत्र भारत की वर्तमान शासन व्यवस्था, जो मौलिक रूप से औपनिवेशिक भारत की ही शासन व्यवस्था है, हमारे संविधान में प्रतिपादित और परिभाषित है। हमारे संविधान निर्माता यह तो जानते ही थे कि यह व्यवस्था वह नहीं है, जिसकी वकालत महात्मा गांधी करते रहे थे। दूरदर्शिता का अभाव और अन्य ऐतिहासिक कारणों से हमारे संविधान में हमारे राष्ट्रपिता की अवज्ञा और उनके विचारों की अवहेलना हुई। आने वाली पीढ़ियों को अगर इस ऐतिहासिक भूल का एहसास और अनुभव हो तो तदनुसार संविधान में आवश्यक संशोधन किया जा सके, इसे संभव और सुगम बनाने के लिए संविधान निर्माताओं ने दो युक्तियों का प्रावधान

दूरदर्शिता का अभाव और अन्य ऐतिहासिक कारणों से हमारे संविधान में हमारे राष्ट्रपिता की अवज्ञा और उनके विचारों की अवहेलना हुई। आने वाली पीढ़ियों को अगर इस ऐतिहासिक भूल का एहसास और अनुभव हो तो तदनुसार संविधान में आवश्यक संशोधन किया जा सके, इसे संभव और सुगम बनाने के लिए संविधान निर्माताओं ने दो युक्तियों का प्रावधान किया है। एक तो संविधान में ''राज्यनीति के लिए निर्देशक सिद्धांत'' का समावेश और दूसरा, संविधान संशोधन की अपेक्षाकृत सुगमता।

किया है। एक तो संविधान में ''राज्यनीति के लिए निर्देशक सिद्धांत'' का समावेश और दूसरा, संविधान संशोधन की अपेक्षाकृत सुगमता। इन्हीं प्रावधानों के आधार पर स्वतंत्रता के 45 वर्षों बाद पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त बनाने के लिए 1992 में आवश्यक संशोधन किए गए। संविधान के इन 72वें एवं 73वें संशोधन के कार्यान्वयन के बीस वर्षों बाद भी आज हम अनुभव कर रहे हैं कि हम महात्मा गांधी के 'ग्राम गणतंत्र' की अवधारणा से कोसों दूर हैं। इससे तो ऊपर की भ्रष्ट राजनीति और भ्रष्टाचार गांवों तक पहुंच गया है। इसके लिए तो शासन व्यवस्था में मौलिक परिवर्तन अनिवार्य है। यह मौलिक परिवर्तन भी संविधान के संवैधानिक प्रावधानों के तहत व्यापक संशोधन के जरिये लाया जा सकता है। शासन व्यवस्था तो संविधान की आत्मा या अपरिवर्तनीय रूप नहीं है। यह तो संविधान में उल्लिखित भारत के लोगों की संविधानिक आकांक्षाओं एवं अपेक्षाओं को जमीन पर उतारने का एक तंत्र है। 63 वर्षों के अनुभव के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर अकाट्य रूप से पहुंच गए हैं कि वर्त्तमान तंत्र सर्वथा अनुपयुक्त ही नहीं, प्रतिगामी भी है। संविधान में संशोधन कर वर्तमान शासन व्यवस्था को हटाकर परिवर्तित शासन व्यवस्था, जिसकी अवधारणा और स्वरूप का उल्लेख पहले किया गया है, संविधान में प्रतिष्ठित किया जाना है। और इसके अनुरूप विधायी एवं प्रशासनिक प्रक्रियाओं द्वारा उसे देश में स्थापित करना है।

शासन व्यवस्था तो संविधान की आत्मा या अपरिवर्तनीय रूप नहीं है। यह तो संविधान में उल्लिखित भारत के लोगों की संविधानिक आकांक्षाओं एवं अपेक्षाओं को जमीन पर उतारने का एक तंत्र है। 63 वर्षों के अनुभव के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर अकाट्य रूप से पहुंच गए हैं कि यह तंत्र सर्वथा अनुपयुक्त ही नहीं, प्रतिगामी भी है।

वर्तमान संविधान संशोधन प्रक्रिया के अनुसार शासन व्यवस्था में परिवर्तन के लिए यथोचित संविधान संशोधन बिल संसद के दो तिहाई बहुमत से पारित होना आवश्यक है। इसके लिए ऐसे राजनीतिक दल के अस्तित्व में आने की जरूरत है, जो शासन व्यवस्था में इस तरह के परिवर्तन के लिए प्रतिबद्ध हो तथा अपेक्षित परिवर्तन उसके चुनाव घोषणा पत्र का मुख्य अंग हो। फिर व्यापक कार्यक्रम के जरिए जनता को इस परिवर्तन के लिए समुचित जानकारी देना, इसमें शिक्षित करना और इसके लिए अभिप्रेरित करना होगा। इस प्रकार से अभिप्रेरित जनता प्रतिबद्ध राजनीतिक दल को बहुमत के साथ सत्ता में लाकर व्यवस्था परिवर्तन की राह प्रशस्त कर देगी। यक्ष प्रश्न है कि क्या जनता शासन व्यवस्था परिवर्तन के महत्व को सही रूप में समझेगी, अभिप्रेरित होगी और तदनुसार क्रियाशील होगी? जिन्होंने भारत के इतिहास को सही रूप में समझा है, वे भारत की जनता की समझ, ग्राह्यता, और अनुक्रियाशीलता के प्रति अवश्य आश्वस्त होंगे। बुद्ध और शंकराचार्य के समय के प्राचीन भारत में जनजीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन के संदेश को बखूबी समझने की बात छोड़ भी दें, तो आधुनिक भारत में शासन व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने के लिए महात्मा गांधी के आह्वान पर करोड़ों भारतीयों द्वारा स्वतंत्रता संग्राम में बलिदान देना, जयप्रकाश के नारा 'सत्ता परिवर्तन नहीं, व्यवस्था परिवर्तन' पर 25 साल से अधिक समय से जमी हुई सरकार को उखाड़ फेंकना और राजीव गांधी द्वारा एक आधुनिक भारत के निर्माण की संभावना को साकार करने के लिए अभूतपूर्व बहुमत से उन्हें जिताना – जैसी ऐतिहासिक घटनाओं के घटित होने के बाद भारत के लोगों की अद्वितीय समझ और अनुक्रियाशीलता में किसी को कोई संदेह नहीं होना चाहिए।

यह ठीक है कि ऐतिहासिक कारणों से हर बार जनता अपने को ठगा हुआ महसूस करने लगी। हमें जनता की इस भावना और निराशा का समुचित विश्लेषण कर सही सीख लेनी चाहिए। लेकिन जनता की समझ, ग्राह्यता और अनुक्रियाशीलता तो स्पष्ट और निर्विवाद है। इसके अलावा भारत के राजनीतिक परिदृश्य में सार्वभौम वयस्क मताधिकार अच्छी तरह प्रतिष्ठित हो चुका है। फिर चुनाव आयोग द्वारा निष्पक्ष, प्रभावी और कार्यकुशल रूप से अपने दायित्वों का निर्वहन भी राष्ट्र के राजनीतिक जीवन की एक परंपरा बन चुकी है।

उपर्युक्त बातों के मद्देनजर शासन व्यवस्था परिवर्तन अभियान की मार्गदर्शिका तथा इसकी सफलता की संभावना स्पष्ट है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले और
स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद : एक विडंबना

महात्मा गांधी के प्रेरणादायी नेतृत्व में संचालित भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भारत की स्वतंत्रता के स्वरूप के सम्बंध में पं० जवाहर लाल नेहरू के कतिपय विचार, जो उनकी पुस्तक Discovery of India में व्यक्त हैं, पर गौर करें।

1. भारत के स्वतंत्रता संग्राम के प्रति जो यहाँ के उन जैसे मध्यमवर्गीय लोगों की भावना थी, उसका उन्होंने इस तरह इजहार किया : ''ब्रिटिश शासन में भारत के मध्यमवर्गीय लोग अपनी बेहतरी और उन्नति में घुटन और अवरोध महसूस करते थे और फलतः उस शासन के प्रति उनमें विद्रोह की भावना जगी। लेकिन ऐसी भावना उस व्यवस्था के प्रतिरोध में नहीं थी, जो हमें कुचल रही और कुंठित कर रही थी। वे लोग इस व्यवस्था को बरकरार रखते हुए सिर्फ अंग्रेजों को हटाकर इसका खुद संचालन करना चाहते थे।''

2. 1937 में प्रदेश की सरकारों के गठन के लिये हुए चुनावों में जो उन्होंने भाषण दिए, उनमें स्वतंत्रता के उद्देश्य के प्रति इन शब्दों में उन्होंने अपनी भावना व्यक्त की, ''मैंने भारत की स्वतंत्रता का विश्लेषण इस तरह किया कि भारत के करोड़ों लोगों के लिए इस स्वतंत्रता का क्या अर्थ होना चाहिए : हम लोग सिर्फ गोरे मालिकों को हटाकर उनकी जगह भूरे भारतीय लोगों को स्थापित नहीं करना चाहते हैं, हमलोग वास्तविक रूप में जनता का, जनता के द्वारा और जनता के लिए शासन व्यवस्था चाहते हैं, जिससे हमारी गरीबी और बदहाली दूर हो।''

3. अंग्रेजों की औपनिवेशिक शासन व्यवस्था के सम्बंध में उन्होंने अपनी पुस्तक में कई स्थानों पर अपने विचारों को भिन्न-भिन्न रूप से व्यक्त किया है। जैसे,

(i) ''औपनिवेशिक शासन व्यवस्था देश की सृजनात्मक और रचनात्मक शक्तियों का दमन करती है, इसकी प्रतिभा और सामर्थ्य को कुंठित करती है और लोगों में जवाबदेही की भावना को निरूत्साहित करती है।''

(ii) ''अंग्रेज लोग शुरू में तो भारत में अपना व्यापारिक हित साधने आए थे, लेकिन यहाँ व्याप्त राजनीतिक विघटन का लाभ लेते हुए उन्होंने यहाँ अपना शासन स्थापित कर लिया जिससे इस देश का शोषण करने और इसे लूटने में सहूलियत हो। इस उद्देश्य से जो उन्होंने यहाँ शासन व्यवस्था लागू की और उसके तहत जो नीतियां और कार्यक्रम उन्होंने अपनाया उनसे भारत उत्तरोत्तर गरीब और बदहाल होता गया।''

(iii) ''भारत में खुली लूट को अंग्रेजों ने समय के साथ व्यवस्थित शोषण में इस तरह परिणत कर दिया जो देखने में तो वैसा नहीं लगे लेकिन वास्तव में उससे भी बदतर था। इसके चलते भ्रष्टाचार, धन लोलुपता, कुनबापरस्ती, हिंसा और लोभ का जो माहौल देश में पनपा वह समझ से परे है।''

(iv) ''भारत की औपनिवेशिक शासन व्यवस्था काफी बोझिल और खर्चीली है जिसका भार भारत की जनता वहन करती है''

(v) ''अंग्रेजों के आने से पहले भारत की अर्थव्यवस्था का जो आधार ग्राम केन्द्रित था, वह अंग्रेजों के शासन में छिन्न-भिन्न हो गया। गाँवों की आर्थिक और प्रशासनिक स्वायत्तता खत्म हो गयी। सर चार्ल्स मेटकॉफ नामक एक बहुत ही योग्य अंग्रेज पदाधिकारी ने 1830 ई० में भारत के ग्राम्य समुदाय का इस तरह चित्रण किया था, ''यहाँ के ग्राम्य समुदाय छोटे गणतंत्र की तरह हैं जहाँ उनकी जरूरतों की सभी चीजें उन्हें उपलब्ध रहती हैं और उनके लिए वे दूसरे पर आश्रित नहीं हैं। बाहर चाहे जो भी परिवर्त्तन हों, ग्राम्य व्यवस्था उससे अप्रभावित रहती है। इस तरह के ग्राम्य समुदायों के संघ में, जिसमें हर ग्राम्य समुदाय स्वायत्त है, लोगों का जीवन काफी खुशहाल है और लोग अपनी स्वतंत्रता और स्वायत्तता का पूर्ण उपभोग करते हैं।''

महात्मा गांधी के शीर्ष अनुयायी, स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी योद्धा और भारत के लोकप्रिय नेता के स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व के इन विचारों के मद्देनजर यह एक ऐतिहासिक विडम्बना है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्वतंत्र भारत के लिए उनके नेतृत्व में मूलतः वही औपनिवेशिक शासन व्यवस्था अपना ली गयी।

परिवर्तित शासन व्यवस्था में
भारत का स्वरूप

स्वतंत्र भारत में जैसी शासन व्यवस्था महात्मा गांधी चाहते थे, मूलतः वैसी ही शासन व्यवस्था संयुक्त राज्य अमेरिका में क्रियाशील है। भारत की अपेक्षा अमेरिका में भ्रष्टाचार नगण्य है, अंतर्विद्रोह या अलगाववाद जैसी कोई समस्या नहीं है, आम लोगों का जीवन स्तर काफी बेहतर है, दुनिया का सबसे विकसित राष्ट्र है, राष्ट्रीय सरकार बहुत सुदृढ और सबल है, राजनैतिक नैतिकता का स्तर ऊंचा है और दुनिया के वैज्ञानिकों, विचारकों, आर उद्यमियों को अपनी प्रतिभा विकसित करने और फलस्वरूप इस देश को और समृद्ध करने के लिए दशकों से और आज भी आकर्षित कर रहा है। इस देश की इन विशेषताओं को विकसित करने और अक्षुण्ण रखने में यहां की शासन व्यवस्था की अहम भूमिका है।

परिवर्तित शासन व्यवस्था स्थापित होने पर भारत का स्वरूप एकदम बदल जाएगा और एक नए भारत का उदय होगा। बहुत सी समस्याएं, जिनसे आज भारत ग्रसित है और इसके स्वरूप को विकृत कर रही हैं, मूलतः व्यवस्थाजनित हैं। ये समस्याएं व्यवस्था परिवर्तन से स्वतः निर्मूल और समाप्त हो जाएगी। राष्ट्र और राष्ट्रीय जीवन की विभिन्न समस्याओं और आयामों पर शासन व्यवस्था परिवर्तन के प्रभाव की विवेचना निम्नलिखित है:

1. भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार और घोटाले आज की सर्वप्रमुख व्यवस्थाजनित समस्याएं हैं। परिवर्तित शासन व्यवस्था स्थापित होने पर ये समस्याएं समाप्तप्राय हो जाएंगीं। वर्तमान व्यवस्था में सार्वजनिक पैसा गांवों और शहरों में रहने वाले लोगों से विभिन्न तरीकों और रूपों से चलकर कर के रूप में राज्य या केंद्र के सरकारी खजानों में पहुंचता है और विकास एवं सेवा कार्यों के लिए फिर उन्हीं लोगों के यहां वापस पहुंचता है। पैसे की इस यात्रा में व्यवस्थागत (स्थापना, भ्रष्टाचार और घोटाला) और अव्यवस्थागत (नैतिक पतन) कारणों से बहुत ही नुकसान होता है। तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी का यह मशहूर बयान कि ''दिल्ली से गांव के किसी काम के लिए भेजा हुआ एक रुपया गांव में सिर्फ 15 पैसा ही पहुंचता है'', इसी नुकसान के एक पक्ष को दर्शाता है।

इस नुकसान का दूसरा पक्ष है कर संग्रह प्रणाली में व्याप्त भ्रष्टाचार, जिसके चलते जनता के पॉकेट से निकला हुआ एक रुपया सरकारी खजाने में अनुमानतः पचास पैसा ही पहुंचता है। इस तरह जनता के करों का सिर्फ 7.5 प्रतिशत ही विकास और विभिन्न सेवाओं में लगता है। इसका अधिकांश भाग भ्रष्टाचार और घोटालों के रूप में देश का कालाबाजार चलाता है। इस नुकसान का दूसरा कारक है सरकार की जनता से दूरी और अपारदर्शिता। दिल्ली का पैसा गांव के काम में खर्च करने में भ्रष्टाचार की जो संभावनाएं और मानसिकता रहती है, वह गांव का पैसा गांव के काम में खर्च करने में नहीं रहेगी।

परिवर्तित शासन व्यवस्था में ये दोनों कारक नहीं रहेंगे, जिससे भ्रष्टाचार के वर्तमान स्तर का प्रायः 90 प्रतिशत समाप्त हो जाएगा। अव्यवस्थागत, व्यक्तिगत या व्यवस्था में कमजोरियों के कारण जो भ्रष्टाचार होगा, उसका निराकरण यथा आवश्यक कानूनों और नियमों के द्वारा सफलतापूर्वक किया जा सकेगा।

वर्तमान व्यवस्था में मनमाने ढंग से परिभाषित कानून और नियम हैं, जिसे जनता समझती भी नहीं। इन नियमों-कानूनों को स्वीकार करना तो दूर, इसके कारण उसकी सृजनात्मकता कुंठित हो जाती है। लेकिन गांवों और शहरों में जब स्वायत्त सरकारें कार्यशील हो जाएंगीं तो लोगों की सृजनात्मक और उत्पादक ऊर्जा पूरी तरह फलीभूत होने लगेगी। लोगों के जीवन और जीने के तरीके में गुणात्मक बेहतरी के अलावा यह विभिन्न रूपों में देश के सकल घरेलू उत्पाद में भी वृद्धि लाएगी। इससे न सिर्फ आर्थिक विकास की गति बढ़ेगी, बल्कि यह प्रत्यक्ष रूप से गरीबी का स्तर भी घटाएगी। यह स्थिति अभी की स्थिति से भिन्न होगी। अभी की स्थिति के बारे में विवादास्पद रूप से कहा जाता है कि समृद्धि ऊपर से नीचे की ओर बूंद-बूंद टपकती है। स्पष्ट रूप से अनुभव किया गया है कि ऐसी अवधारणा भ्रामक है। नई शासन व्यवस्था स्थापित होने पर विकास और विकासजनित समृद्धि की धारा गांवों से फूटेगी जिससे समाज में गरीबों की संख्या घटती जाएगी और एक समतामूलक समाज का प्रार्दुभाव होगा।

2. अंतर्विद्रोह और अलगाववाद

परिवर्तित शासन व्यवस्था में अंतर्विद्रोह का आधार खत्म हो जाएगा। जनसमुदाय के कुछ वर्ग में असंतोष और समाज के हाशिये पर जाने के फलस्वरूप अंतर्विद्रोह ज्यादातर गांवों और दूर-दराज के इलाकों में ही जन्म लेता एवं पनपता है और इसका निशाना होता है दूर स्थित सरकार। जब गांव में ही एक शक्ति संपन्न सरकार कार्यशील होगी, अंतर्विद्रोह स्वतः समाप्त हो जाएगा। प्रायोगिक अनुभव से भी इसकी पुष्टि हुई है। बिहार सरकार ने कुछ नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में जब ''सरकार आपके द्वार'' कार्यक्रम शुरू किया तो देखा गया कि उन क्षेत्रों में नक्सल गतिविधियों में व्यापक गिरावट हुई। इसी तरह देश में अलगाववाद या क्षेत्रवाद, जो व्यवस्था में असहभागिता या परायेवाद की भावना से जन्म लेता है, नयी शासन व्यवस्था में अर्थहीन हो जाएगा।

जहां ग्राम सरकार या नगर सरकार ही सरकार की प्रथम महत्वपूर्ण इकाई होगी, राज्यों को विखंडित कर नए राज्यों के गठन के लिए देश के विभिन्न हिस्सों में जो आंदोलन चल रहे हैं, वे भी आधारहीन हो जाएंगें। अतः परिवर्तित शासन व्यवस्था न सिर्फ सच्चे रूप में लोकतांत्रिक शासन बल्कि समावेशी शासन भी लाएगी।

3. गरीबी

वर्तमान व्यवस्था में मनमाने ढंग से परिभाषित कानून और नियम हैं, जिसे जनता समझती भी नहीं। इन नियमों -कानूनों को स्वीकार करना तो दूर, इसके कारण उसकी सृजनात्मकता कुंठित हो जाती है। लेकिन गांवों और शहरों में जब स्वायत्त सरकारें कार्यशील हो जाएंगी तो लोगों की सृजनात्मक और उत्पादक ऊर्जा पूरी तरह फलीभूत होने लगेगी। लोगों के जीवन और जीने के तरीके में गुणात्मक बेहतरी के अलावा यह विभिन्न रूपों में देश के सकल घरेलू उत्पाद में भी वृद्धि लाएगी। इससे न सिर्फ आर्थिक विकास की गति बढ़ेगी, बल्कि यह प्रत्यक्ष रूप से गरीबी का स्तर भी घटाएगी। यह स्थिति अभी की स्थिति से भिन्न होगी। अभी की स्थिति के बारे में विवादास्पद रूप से कहा जाता है कि समृद्धि ऊपर से नीचे की ओर बूंद-बूंद टपकती है। स्पष्ट रूप से अनुभव किया गया है कि ऐसी अवधारणा भ्रामक है। नई शासन व्यवस्था स्थापित होने पर विकास और विकासजनित समृद्धि की धारा गांवों से फूटेगी जिससे समाज में गरीबों की संख्या घटती जाएगी और एक समतामूलक समाज का प्रार्दुभाव होगा।

4. राजनीति का स्वरूप

परिवर्त्तित शासन व्यवस्था में भारत के राजनीतिक स्वरूप में महत्त्वपूर्ण रूप में बदलाव आ जायेगा। कई कारणों से ऐसा बदलाव अवश्यंभावी है। भारतीय राजनीति को विकृत करने में वर्त्तमान शासन व्यवस्था की व्यवस्थागत विकृतियां, विशेषकर भ्रष्टाचार ही जिम्मेदार है। चूँकि परिवर्त्तित शासन व्यवस्था में भ्रष्टाचार समाप्तप्राय हो जायेगा, राजनीति की विकृति भी समाप्तप्राय हो जायेगी। राजनीति के स्वरूप को बदलने का जो दूसरा महत्त्वपूर्ण कारक होगा, वह है नयी व्यवस्था में शासन का बहुस्तरीय और बहुकेन्द्रित होना। आज की व्यवस्था में शासन के दो ही स्तर है, केन्द्र और राज्य और सत्ता तीन ही केन्द्रों पर घनीभूत है,

डीएम, सीएम और पीएम। परिवर्त्तित व्यवस्था में जब शासन बहुस्तरीय और बहुकेन्द्रित होगा, सत्ता का स्वरूप ही बदल जायेगा। तब राजनीति सत्ता केन्द्रित नहीं हो कर लोक केंद्रित हो जायेगी। जिस तरह से अंग्रेज भारत में अपने औपनिवेशिक शासन को बचाने और कायम रखने के लिए ''बांटो और राज करो'' की रणनीति अपनाते रहे, जिसकी परिणति देश के बंटवारे में हुई, उसी तरह और उसी उद्देश्य यानी सत्ता पाने एवं इसे कायम रखने के लिए आज राजनीतिक दल न सिर्फ संप्रदाय के नाम पर, बल्कि जाति और क्षेत्र के नाम पर भी समाज को बांटने से परहेज नहीं करते। इसमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए, क्योंकि इस शासन व्यवस्था में ऐसी रणनीति स्वाभाविक है। परिवर्तित शासन व्यवस्था में यह रणनीति अर्थहीन हो जाएगी, क्योंकि इसमें उनका राजनीतिक दर्शन और देश की समस्याओं व हितों के प्रति उनकी सोच और कार्यक्रम राजनीतिक दलों की पहचान होगी, तथा राजनीति में अवांछित और अयोग्य तत्वों का आकर्षण एवं प्रवेश बहुत ही सीमित हो जाएगा।

इस तरह राजनीति भारतीय संस्कृति के अनुरूप नैतिकता के अपने पुराने उच्च स्तर पर फिर आसीन हो जायेगी।

5. विकास

परिवर्तित शासन व्यवस्था में विकास की दशा और दिशा दोनों ही महत्वपूर्ण और व्यापक रूप से बदल जाएगी। यदि हम भ्रष्टाचार के गणित की ओर ध्यान दें तो पाएंगे कि जनता अपनी मेहनत से कमाए धन का जो हिस्सा विभिन्न करों के रूप में सरकार को देती है, अभी के शासन तंत्र में उसका 7.5 प्रतिशत ही वास्तविक विकास में लगता है। इसका 92.5 प्रतिशत भ्रष्टाचार, घोटाला, कालाबाजारी और इस बोझिल और अपेक्षाकृत मंहगे शासनतंत्र को कायम रखने में लग जाता है। और यही देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और प्रशासनिक विकृतियों को जन्म और पोषण देता है।

परिवर्तित शासनतंत्र में विकास के लिए उसके द्वारा दिए गए पैसे का उपयोग 7.5 प्रतिशत से बढ़कर 90 प्रतिशत हो जाएगी जो विकास की गति को 13-14 गुना बढ़ा देगी।

फिर ऐसे विकास की धारा भी बदल जाएगी। अब विकास की धारा दिल्ली और राज्यों की राजधानियों से चलकर गांवों या शहरों में क्रमशः क्षीण होती हुई नहीं आएगी, बल्कि यह धारा गांव या शहर में ही प्रस्फुटित होगी।

हमारे देश की बहुत सी समस्याएं जिनसे जनजीवन त्रस्त है और जिनका समाधान आज के वैज्ञानिक और तकनीकी युग में संभव है, उनका भी समाधान इसलिए नहीं हो पा रहा है कि सही विज्ञान और तकनीक प्रयुक्त नहीं हो रहा है और ऐसा इसलिए हो रहा है कि राजनैतिक निर्णयकर्ता का इसमें कोई इत्तेफाक या प्रतिबद्धता नहीं है। सत्ता केंद्रित और सत्ता प्रेरित राजनीति में उन्हीं मुद्दाओं का वजन है जिन्हें सतह पर लाकर या उभार कर जनमानस को उद्वेलित किया जा सके और वह उद्वेलन वोट में परिणत हो सके। बहुसंख्यकों की धार्मिक भावनाओं को उभारना, अल्प-संख्यकों का तुष्टीकरण, जातीयता तथा क्षेत्रीयता का भावबोध कराना, भाषायी या अन्य आधारों पर अलग राज्यों की स्थापना या रोजमर्रे की जिंदगी प्रभावित करने वाली तात्कालिक आर्थिक स्थिति ऐसे मुद्दे हैं जो वोट और सत्ता की राजनीति के लिए तुरंत फलदायी हैं। सही विज्ञान और तकनीक अपना कर जनता को दुःख-दर्दों से त्राण दिलाने और उनका

परिवर्तित शासन व्यवस्था में विकास की दशा और दिशा दोनों ही महत्वपूर्ण और व्यापक रूप से बदल जाएगी। यदि हम भ्रष्टाचार के गणित की ओर ध्यान दें तो पाएंगे कि जनता अपनी मेहनत से कमाए धन का जो हिस्सा विभिन्न करों के रूप में सरकार को देती है, अभी के शासन तंत्र में उसका 7.5 प्रतिशत ही वास्तविक विकास में लगता है। इसका 92.5 प्रतिशत भ्रष्टाचार, घोटाला, कालाबाजारी और इस बोझिल और अपेक्षाकृत मंहगे शासनतंत्र को कायम रखने में लग जाता है। और यही देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और प्रशासनिक विकृतियों को जन्म और पोषण देता है। परिवर्तित शासन व्यवस्था में विकास के लिए उसके द्वारा दिए गए पैसे का उपयोग 7.5 प्रतिशत से बढ़कर 90 प्रतिशत हो जाएगा जो विकास की गति को 13-14 गुना बढ़ा देगा। फिर ऐसे विकास की धारा भी बदल जाएगी।

जीवन खुशहाल करने जैसे मुद्दों की न तो आज के राजनीतिज्ञों में कोई समझ है और न आज की राजनति में उनका कोई समुचित स्थान है। फलस्वरूप जनता विज्ञान और तकनीक के इन संभावित लाभों से मरहूम है और अनावश्यक रूप से अभिशप्त या निम्नस्तरीय जीवन जीने को मजबूर है। इसका सबसे समीचीन उदाहरण बिहार और उत्तर प्रदेश में बाढ़ की साल-दर-साल की त्रासदी है। आधुनिक जल विज्ञान और तकनीकी में इस बाढ़ का प्रभावकारी समाधान कर इसे प्रकृति के वरदान में परिणत करने की स्पष्ट संभावना और क्षमता है। इसमें नेपाल से अपेक्षित सहयोग न मिलने की जो बात भारत सरकार या बिहार सरकार द्वारा जनता को परोसी जाती रही है वह समझ के नितांत परे है, क्योंकि इसी सहयोग में ही तो नेपाल की गरीबी हटाने का ही नहीं बल्कि इसे एक समृद्ध देश बनाने का आधार है। लेकिन भारत सरकार या बिहार सरकार की सत्ता केंद्रित राजनीति में इस वार्षिक त्रासदी के प्रति न कोई संवेदना है, न विज्ञान और तकनीक का वह स्थान है, न राजनीतिक इच्छा शक्ति है और ना ही सार्थक प्रयास है। फलस्वरूप जिस प्रक्षेत्र में सबसे उपजाऊ भूमि, प्रचुर जल, सालों भर कृषि योग्य जलवायु तथा कृषि संस्कृति संपन्न विशाल जनशक्ति स्थित है, वहां की करोड़ों जनता आजादी के साठ सालों के बाद भी गरीबी और बदहाली की जिंदगी जीने के लिए अभिशप्त है और रोजी-रोटी के लिए पलायन को मजबूर है। यह एक विकृत शासन व्यवस्था में ही संभव है,

सही विज्ञान और तकनीक अपना कर जनता को दुःख-दर्दों से त्राण दिलाने और उनका जीवन खुशहाल करने जैसे मुद्दों की न तो आज के राजनीतिज्ञों में कोई समझ है और न आज की राजनीति में उनका कोई समुचित स्थान है। फलस्वरूप जनता विज्ञान ओर तकनीक के इन संभावित लाभों से मरहूम है।

परिवर्तित शासन व्यवस्था में कदापि नहीं।

6. मजबूत राष्ट्र और राष्ट्रीय सरकार

नई बहुकेंद्रित शासन व्यवस्था में, जिसमें गांवों के स्तर पर भी मजबूत सरकार होगी, देश मजबूत होगा। कमजोर गाँवों का समूह कभी भी मजबूत राष्ट्र नहीं बना सकता। कोई चेन उतना ही मजबूत होगा जितना कि उसकी सबसे कमजोर कड़ी।

केंद्रीय सरकार ऐसे बहुत से उत्तरदायित्वों से मुक्त हो जाएगी, जिनका निराकरण अन्य स्तर की सरकारों द्वारा बेहतर तरीके से किया जा सकेगा, क्योंकि ये उत्तरदायित्व उन्हीं स्तरों के लिए ज्यादा सरोकार और महत्व के हैं। केंद्रीय सरकार वैसी समस्याओं से निपटने और अपनी ऊर्जा क्षीण करने से निजात पा जाएगी, जो आज हमारे देश को तबाह और कमजोर कर रही हैं, जैसे भ्रष्टाचार, अंतर्विद्रोह, अलगाववाद और राजनीति से प्रेरित अलग एवं छोटे राज्यों के लिए आंदोलन और मांग। जैसा हमने ऊपर देखा, परिवर्तित शासन व्यवस्था में ये समस्याएं उत्पन्न ही नहीं होंगी। तब केंद्रीय सरकार वैसे उत्तरदायित्वों का निर्वहन करने में ज्यादा सक्षम होगी, जो वास्तव में राष्ट्रीय स्तर के हैं, यथा रक्षा, विज्ञान और तकनीकी विकास, दूरगामी महत्व के ऐसे वैज्ञानिक और तकनीकी उपक्रम जैसे अंतरिक्ष विज्ञान और तकनीक तथा निरंतर बढ़ते हुए अन्तर्प्रभाव वाले इस वैश्विक परिवेश में अंतर्राष्ट्रीय संबंध और समस्याएं।

7. नए भारत का उदय

परिवर्तित शासन व्यवस्था में राष्ट्र के परिदृश्य में उपर्युक्त बदलाव सिर्फ संकेतात्मक है। इसके साथ ही इनसे संबद्ध स्थितियों में भी बदलाव आएगा और बदलाव बहुत व्यापक होगा। इन बदलावों के प्रभाव से देश के कोने-कोने में बहुत से रचनात्मक कार्य और गतिविधियां होने लगेंगी जिससे अभी जो हमारा देश पतन और भ्रष्टता की राह पर अधोगत है, फिर से जीवित होकर प्रगति के पथ पर दृढ़तापूर्वक अग्रसर होगा। नई शासन व्यवस्था स्थापित होने पर भारत सदियों बाद ब्रिटिश औपनिवेशिक संस्कृति, जो हमारी अपनी उच्च संस्कृति पर जानबूझ कर गलत उद्देश्य के लिए थोपी गई थी, के मोहबंधन से मुक्त हो जाएगा और अपनी स्वाभाविक स्थिति में आ जाएगा। तब कविवर रवींद्रनाथ ठाकुर की आकांक्षित स्थिति ''तब भारत उस स्वतंत्रता के स्वर्ग में जगे'', और तब गांधी के सपनों के भारत का उदय होगा , और तब फिर अशांत विश्व इस नए भारत की ओर नई रोशनी और पथ प्रदर्शन के लिए उन्मुख होगा।

भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन
अभियान और विचार मंच

डा. त्रियुगी प्रसाद
सचिव-सह-संयोजक

1999 में संपन्न राष्ट्रीय चुनाव के आधार पर श्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन के पांच वर्षों के शासनकाल में देश को उद्वेलित करने वाली कोई विशेष क्षेत्रीय, राष्ट्रीय, या अंतर्राष्ट्रीय समस्या उत्पन्न नहीं हुई थी। आर्थिक क्षेत्र में भी कोई असंतोषजनक स्थिति नहीं रही थी। सत्तारूढ़ दल या गठबंधन द्वारा प्रचारित "चमकता हुआ भारत" (Shining India)के बारे में भी आमतौर पर अतिशयोक्ति की कोई आपत्ति नहीं थी। साधारणतया सत्तारूढ़ दल या गठबंधन के प्रति समय के साथ जनता में जो विरक्ति या विरोध की भावना पनपती है, लगता था वह विद्यमान नहीं थी। फिर भी 2004 के चुनाव में सत्तारूढ़ गठबंधन हार गया। ऐसे गठबंधन और उसकी अपेक्षाकृत सफल सरकार से भी जनता का मोहभंग हो गया। और इस मोहभंग के परिणामस्वरूप फिर वह दल या गठबंधन सत्ता में आ गया, जिसे जनता पहले नकार चुकी थी। जनता ने इस दल या गठबंधन को सोच-समझ कर सत्ता में नहीं लाया। यह तो सत्तारूढ़ दल या गठबंधन से जनता के मोहभंग का अवांछित परिणाम था।

2004 के चुनाव ने भारतीय गणतंत्र में जनता के मोहभंग की परंपरा और इसके विश्लेषण का मुझे एक अनुप्रेरक अवसर प्रदान किया। गणतंत्र भारत में 2004 तक संपन्न 14 चुनावों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि जनता किसी घटना, स्थिति या व्यक्ति से भावनात्मक रूप से प्रेरित होकर मन में एक सपना संजो लेती है और इस आशा में कि कोई व्यक्ति या दल उस सपने को पूरा करेगा और जमीन पर उतारेगा, उसे सत्तारूढ़ करती है। और जब वह पाती है कि वह व्यक्ति या दल उसके आशाजनित विश्वास पर खरा नहीं उतरा और उसका विश्वास चकनाचूर हो गया है तो अवसर पाने पर हताशा और निराशा में उसे सत्ताच्युत कर देती है। और कर भी क्या सकती है? भारतीय गणतंत्र के दशकों से अधिक के इतिहास में यह बात उभर कर आयी है कि समय जो भी लगा हो, देर-सबेर जनता हर बार निराश और हताश ही हुई है। हर चुनाव या तो जनता की आशा से प्रेरित होता है, या उसकी हताशा का द्योतक होता है। कोई भी चुनाव जनता के संतोष या जनता के अनुमोदन का परिचायक नहीं है। प्रश्न है, जनता चाहती क्या है, क्या है जनता की आकांक्षा, क्या है उसका सपना जिसका पूरा होना वह आजतक नहीं देख पायी या जिसके पूरा होने के प्रयास और प्रगति पर कभी संतोष नहीं व्यक्त कर सकी? इस प्रश्न के उत्तर के लिए हम चलें भारत के अनूठे स्वतंत्रता संगाम की ओर।

1885 ई॰ में नवगठित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के तत्वावधान में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की जब शुरुआत हुई तो यह मुख्यतया उच्च मध्यमवर्गीय आंदोलन था, जिसका उद्देश्य था शासन व्यवस्था में भारतीयों की ज्यादा से ज्यादा सहभगिता। इस

संग्राम में जब महात्मा गांधी आए और इस क्रम में उन्होंने भारत के गांवों में लोगों की जो दयनीय दशा प्रत्यक्ष रूप से देखी तो वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि **''अंग्रेजों द्वारा भारत पर थोपी गयी यह शासन व्यवस्था ही उनकी इस स्थिति के लिए जिम्मेदार है। इस व्यवस्था के द्वारा न सिर्फ देश और इसके संसाधनों का आर्थिक शोषण, बल्कि यहां के लोगों का नैतिक भ्रष्टीकरण भी सुनियोजित रूप से किया जा रहा है।''** अतः उनके विचार में **''भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का मूल उद्देश्य है ऐसी शासन व्यवस्था को हटाना, अंग्रेज रहें या जाएं। इसके लिए हमें तत्कालीन भारत या ब्रिटिश सरकार से कोई याचना नहीं करनी है। इसके लिए हम इस शासन व्यवस्था से अहिंसक असहयोग करेंगे जिसके लिए हम पूर्ण सक्षम हैं''**। अपने इन्हीं मौलिक विचारों के आधार पर वह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के नायक बने, इसी आधार पर उन्होंने देश की आम जनता को इस संग्राम में सम्मिलित होने का आह्वान किया और इसी आधार पर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम जनसंग्राम बन गया, और 15 अगस्त 1947 को देश स्वतंत्र हो गया। लोगों को लगा कि अब उनका सपना साकार होगा, वह सपना जिसका ताना-बाना महात्मा गांधी के नेतृत्व में संचालित स्वतंत्रता संग्राम में बुना गया था। पचास के दशक में एक प्रतिभाशाली फिल्म निर्माता द्वारा बनायी गयी पुरस्कृत फिल्म 'बूट पॉलिश' के एक लोकप्रिय गाने की इन पंक्तियों में स्वतंत्र भारत में जनता के इन सपनों का आभास मिलता है, ''नन्हे-मुन्ने बच्चे तेरी मुट्ठी में क्या है, मुट्ठी में है तकदीर हमारी, हमने किस्मत को वश में किया है..., आंखों में झूमे उम्मीदों की दीवाली, आने वाली दुनिया का सपना सजा है..., आने वाली दुनिया कैसी होगी समझाओ, आने वाली दुनिया में सबके सर पर ताज होगा, न भूखों की भीड़ होगी, न दुःखों का राज होगा, बदलेगा जमाना, यह सितारों पर लिखा है।''

साठ सालों से ज्यादा समय से जनता इसी सपना के साकार होने का सपना देख रही है। हर चुनाव में जनता या तो इस संभावना से कि कोई विशेष नेता या उसका दल उसके सपनों को पूरा करेगा किसी दल को सरकार में लाती है, या सपना नहीं पूरा होने पर या उन सपनों के प्रति कोई संवेदना नहीं पाकर उस दल को सरकार से हटा देती है। भारतीय चुनाव परिणामों का तो यही संदेश है। इस संदेश को नहीं समझ कर पार्टियां निष्कर्ष निकालती हैं कि जनता ने हमें सरकार बनाने या सरकार से हटने का जनादेश दिया है। हर चुनाव में जनता या तो अपनी आशा प्रकट करती है, या निराशा व्यक्त करती है। किसी विशेष राजनीतिक दल के पक्ष या विपक्ष में जनता का मत उसकी इसी आशा या निराशा की अभिव्यक्ति है। बहुदलीय राजनीति में तो ज्यादातर संसदीय गणित के आधार पर किसी दल या गठबंधन की सरकार बनती है, जनता की भावनाओं, आकांक्षाओं और अपेक्षाओं की भूमिका तो नगण्य ही रहती है। चुनाव के माध्यम से जनता तो अपना करूण क्रंदन ही प्रकट करती है कि मेरे सपनों का क्या हुआ।

इस संदर्भ में जनता के मोह ओर मोहभंग की परंपरा के विश्लेषण के आधार पर मैंने मार्च 2005 में लगभग 80 पृष्ठों का अंग्रेजी में एक प्रलेख लिखा, जिसका शीर्षक है "India's Crying Need for Change of the System of Governance - Call for Action" (शासन व्यवस्था परिवर्तन भारत की चीखती आवश्यकता - कार्रवाई का आह्वान)। इस प्रलेख में दिए गए ऐतिहासिक विश्लेषण, अवधारणाओं और विचारों पर विचार-विमर्श करने के लिए निम्नलिखित विद्वानों की एक बैठक पटना में 22 जनवरी 2006 को बुलायी गयी:

1. डा. एस.एन.दास	पूर्व कुलपति, पटना विश्वविद्यालय
2. डा. एम. मोहिउद्दीन	पूर्व कुलपति, पटना विश्वविद्यालय
3. डा. एस.एन.पी. सिन्हा	पूर्व कुलपति, पटना विश्वविद्यालय
4. डा. आर.के. महतो	पूर्व कुलपति, मगध विश्वविद्यालय
5. डा. आई.सी. कुमार	अवकाशप्राप्त भा.प्र.से. एवं पूर्व कुलपति, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय
6. डॉ. टी. प्रसाद	पूर्व प्राचार्य, बिहार कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग, पटना

बैठक में विचार-विमर्श के बाद इन विद्वतजनों ने निम्नलिखित आशय का एक **''अनुमोदन घोषणा पत्र''** हस्ताक्षरित किया:- ''हमलोगों ने डा. टी. प्रसाद द्वारा अंग्रेजी में लिखित प्रलेख ''India's Crying Need for Change of the System of Governance - Call for Action'' में व्यक्त विचारों पर विचार-विमर्श किया। हमलोग ऐसा समझते हैं कि इस प्रलेख में कही गयी मूल बात, यथा, (i) भारत में उसी शासन व्यवस्था को जो मूलतः एक उपनिवेश के आर्थिक शोषण के लिए संकल्पित की गयी थी, अपनाने और उसी का विस्तार करने के कारण ही इसकी विभिन्न समस्याएं उत्पन्न और विकराल होती गयी हैं, और (ii) यदि राष्ट्रीय जीवन में समय के

साथ बढ़ती विकृतियों और अधोपतन के मार्ग से भारत को हटाकर समृद्धि के ऐसे रास्ते पर लाना है, जो उसकी सांस्कृतिक, बौद्धिक और प्राकृतिक संसाधनों के अनुरूप हो, तो इस प्रलेख में दर्शाया गया शासन व्यवस्था परिवर्तन अनिवार्य है, सैद्धांतिक रूप से महत्त्वपूर्ण है और कार्य रूप में भारत के लिए बहुत अनिवार्य है। राष्ट्र को अविलंब इस परिवर्तन के मार्ग पर प्रवर्तित कराया जाय। भारत के लिए इस महत्वपूर्ण मिशन को सफलता की मंजिल तक ले जाने के लिए हम सब लोगों से डा. टी. प्रसाद के नेतृत्व में संचालित इस अभियान में सहयोग और सहभागिता के लिए आगे आने की अपेक्षा करते हैं।''

22 जनवरी 2006 को पटना के श्रीकृष्णपुरी मुहल्ले में स्थित एक ऑफिस में इन विद्वतजनों द्वारा अनुमोदन घोषणा पत्र हस्ताक्षरित होने के साथ ही भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन का अभियान शुरू हो गया। इस अभियान के प्रथम चरण के रूप में भारतीय शासन व्यवस्था विचार मंच स्थापित हुआ और निर्णय हुआ कि इस बैठक में भाग लेने वाले सभी व्यक्ति इस विचार मंच के कोर ग्रुप के रूप में रहेंगे और वही बैठक इस कोर ग्रुप की प्रथम बैठक मानी जायेगी।

इस बैठक में विचार मंच के सांगठनिक स्वरूप के विषय में निम्नलिखित निर्णय लिए गए:

1. इस कोर ग्रुप का निम्नलिखित ढांचा होगा:

(i) अध्यक्ष
(ii) उपाध्यक्ष -सह-कोषाध्यक्ष
(iii) संयोजक सह सचिव
(iv) संयुक्त सचिव
(v) सदस्यगण

2. भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच का एक बैंक खाता खोला जाएगा, जिसका संचालन कोषाध्यक्ष और सचिव संयुक्त रूप से करेंगें।

3. यह कोर ग्रुप इस विचार मंच का एक संविधान बनायेगा और जब भी आवश्यकता हुई बैठक करेगा। इस कोर ग्रुप की दूसरी बैठक में इस विचार मंच के निम्नलिखित पदाधिकारी बनाए गए :

1. **अध्यक्ष**	**डा. एम. मोहिउद्दीन**	(पूर्व कुलपति, पटना वि.वि.)
2. **उपाध्यक्ष सह कोषाध्यक्ष**	**डा. आई.सी.कुमार**	(पूर्व कुलपति, वीर कुंवर सिंह वि.वि.)
3. **सदस्य**	**डा. एस.एन.पी. सिन्हा**	(पूर्व कुलपति, पटना वि.वि.)
4. **सदस्य**	**डा. आर.के.महतो**	(पूर्व कुलपति, मगध वि.वि.)
5. **संयोजक सह सचिव**	**डा. टी. प्रसाद**	(पूर्व प्राचार्य, बिहार कॉलेज ऑफ इंजीनियरिग)
6. **संयुक्त सचिव**	**श्री भैरव लाल दास**	(रिपोर्टर, बिहार विधान पर्षद)

इस बैठक में यह भी निर्णय हुआ कि विचार मंच का एक बचत बैंक खाता भारतीय स्टेट बैंक के श्रीकृष्णपुरी स्थित पटना ब्रांच में खोला जाय, जिसका संचालन इस मंच के कोषाध्यक्ष एवं सचिव संयुक्त रूप से करेंगे। इस कोर ग्रुप की विभिन्न बैठकों में भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच के कार्यकलाप, कार्यक्रम और गतिविधियों पर विचार-विमर्श होते रहे हैं। इस विचार-विमर्श की मुख्य बातें ये हैं:

1. लक्ष्य – भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन अभियान का लक्ष्य है भारत में वर्तमान शासन व्यवस्था को परिवर्तित कर नई शासन व्यवस्था स्थापित करना। यह लक्ष्य संवैधानिक विधियों से हासिल करना है, जिसे दो चरणों में किया जाना है। पहला चरण वैचारिक है, जिसमें लोगों को जागृत करना तथा इन विचारों से अवगत कराना, उन्हें शिक्षित करना तथा उन विचारों के लिए अभिप्रेरित करना है। दूसरा चरण राजनीतिक है, जिसमें राजनीतिक कार्य संपादित करना है जो विधायी और प्रशासनिक प्रक्रियाओं के माध्यम से संपन्न होगा, जिसका विवरण पत्रिका के ''भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन - क्यों, क्या और कैसे'' शीर्षक लेख में दिया गया है।

पहला चरण **भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच** के माध्यम से संचालित और संपादित होगा, जिसमें दो प्रकार के कार्य होंगे। पहला, इस विचार और विचारधारा का सतत परिमार्जन और परिष्करण, इसके विभिन्न आयामों से संबंधित तथ्यात्मक सामग्रियां एकत्र कर शोधपूर्ण अध्ययन करना तथा विभिन्न स्थानों एवं समुदायों में प्रबुद्ध लोगों की गोष्ठी, कार्यशाला, सेमिनार आदि आयोजित करना है। दूसरा, इस विचार और विचारधारा को जनसमुदाय में विभिन्न माध्यमों से प्रचारित और प्रसारित करना, यथा प्रिंट माध्यम (समाचार पत्र, पत्रिका, पुस्तक, पुस्तिका और इस विचार मंच का मुखपत्र **राष्ट्रीय कायाकल्प**), श्रव्य-दृश्य माध्यम (रेडियो और टीवी), इलेक्ट्रॉनिक माध्यम (इंटरनेट, टेलीफोन, मोबाइल), तथा जन एवं नुक्कड़ सभा।

इस अभियान का दूसरा चरण राजनीतिक है जिसे राजनीतिक कार्य कलापों से सम्पादित करना है। यह चरण पहले चरण में समुचित प्रगति के बाद शुरू किया जाना है।

2. संगठन – किसी भी अभियान की सफलता की शर्त तो उस अभियान के वैचारिक आधार की सम्पुष्टता है। इसके अलावे जो दो बातें अभियान को सफलता की मंजिल तक ले जाने के लिए आवश्यक हैं, वे हैं एक अनुशासित और कार्यकुशल संगठन और दूसरा, पर्याप्त आर्थिक एवं अन्य आवश्यक संसाधन। भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन के द्विचरणीय अभियान के पहले चरण में शुरू किए गए भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच का सांगठनिक ढांचा अभी विकसित होने की प्रक्रिया में है। इस विचार मंच का संविधान भी निर्माण होने की वैचारिक प्रक्रिया में है। लेकिन इस अभियान को जो कार्य संपादित करना है, उसके मद्देनजर इसके सांगठनिक ढांचे का अनिवार्य स्वरूप तो स्पष्ट है, जो निम्नलिखित है। चूंकि यह अभियान राष्ट्रव्यापी है, तो इसका संगठन भी राष्ट्रव्यापी ही होगा। इसको ध्यान में रखते हुए इस अभियान और विचार मंच का कार्यालय देश के प्रत्येक अंचल में होगा। प्रत्येक **अंचल कार्यालय** में उसी अंचल या प्रखंड का एक व्यक्ति इसका संयोजक होगा। अंचल कार्यालय को तीन मुख्य कार्य सम्पादित करना है, (i) अंचल स्तरीय मंच का गठन, जिसके सदस्य उस अंचल के वे सब व्यक्ति हो सकते हैं, जो इसकी सदस्यता के लिए नियत योग्यता रखते हों और शर्तें पूरी करते हों। इन्हीं सदस्यों में से विचार मंच की एक अंचल स्तरीय कार्यकारिणी समिति होगी, जो अंचल स्तर पर होने वाले मंच के विभिन्न कार्यों का संचालन करेगी। (ii) गांव या अन्य इकाइयों के स्तर पर बैठक और सभा आयोजित करना, जिसका उद्देश्य होगा लोगों को इस मंच के विचारों से अवगत कराना, इनमें शिक्षित करना और इस अभियान में अपनी भूमिका निभाने के लिए जागृत और अभिप्रेरित करना। (iii) भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच के केंद्रीय कार्यालय और उस अंचल के बुद्धिजीवियों और अन्य संबद्ध व्यक्तियों के बीच एक कड़ी के रूप में कार्य करना। इन तीन मुख्य कार्यों के अलावा अंचल कार्यालय इस अभियान से संबंधित अन्य कार्य संपादित करेगा, जैसे राशि संग्रह, विचार मंच के साहित्य का विक्रय एवं वितरण। विचार मंच के **केंद्रीय कार्यालय** एवं राष्ट्रव्यापी अंचल कार्यालयों के बीच दो और स्तरों पर कार्यालय होंगे, जो मुख्यतः अपने कार्य क्षेत्र में स्थित अंचल कार्यालयों की गतिविधियों का संयोजन करेंगे और इन अंचल कार्यालयों के बीच कड़ी का काम करेंगे। इस अभियान के भावी कार्यक्रमों के मद्देनजर हर लोकसभा क्षेत्र में एक **क्षेत्रीय कार्यालय** और प्रत्येक राज्य में एक **राज्यस्तरीय कार्यालय** होंगे।

केंद्रीय स्तर पर विचार मंच के निम्नलिखित उत्तरदायित्व और कार्यकलाप होंगे, (i) विचार मंच के सभी अंचल, क्षेत्रीय और राज्यस्तरीय कार्यालयों की गतिविधियों और प्रशासनिक एवं वित्तीय मामलों की देखरेख और मार्गदर्शन प्रदान करना, (ii) विचार मंच के सभी अंचल, क्षेत्रीय और राज्यस्तरीय कार्यालयों को विचार मंच और परिवर्तन अभियान की विचार धाराओं, नीतियों और कार्यकलापों से निरंतर अवगत कराते रहना और तत्संबंधी उनके विचार और सुझाव जानते रहना, जिससे विचार मंच के कार्यक्रमों को सतत परिवर्द्धित और परिमार्जित किया जाता रहे, (iii) इस अभियान के कार्यक्रमों एवं उद्देश्यों से संबंधित विभिन्न विषयों, यथा आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, भौतिक विकास, इत्यादि पर निरंतर शोध और अध्ययन करते रहना जिससे भारत की सम-सामयिक समस्याओं और घटनाओं की गहराई से और विश्लेषणात्मक ढंग से समझ होती रहे, जिससे एक तो इस अभियान के वैचारिक आधार को संपुष्ट किया जाता रहे और दूसरे परिवर्तित शासन व्यवस्था की संरचना के निर्धारण में मदद मिले।

इस विचार मंच का कोर ग्रुप इसके शीर्ष इकाई के रूप में बना रहेगा। इस कोर ग्रुप को निकट भविष्य में जो एक महत्वपूर्ण कार्य करना है, वह है इस विचार मंच का संविधान निर्माण।

3. गतिविधियाँ – अस्तित्व में आने के बाद यह विचार मंच अनवरत कार्यशील रहा है, भले ही इसमें अपेक्षित गति नहीं आयी हो। किसी भी महत्वपूर्ण अभियान, जिसकी विशिष्टता उसका वैचारिक आधार हो, की आरंभिक अवस्था में जड़ता के फलस्वरूप ऐसा होना स्वाभाविक भी है। जब यह अभियान अपनी जड़ता के दायरे से निकलकर बाहर आयेगा, तो विचारों की प्रबलता इसे स्वतः गतिशील बना देगी और गतिविधियां बढ़ती जायेंगीं। इस अभियान के तहत अब तक जो गतिविधियां हुई हैं, उनमें मुख्य गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है:

(क) बैठक, सभा, सम्मेलन-(i) एक अक्तूबर 2009 को

इस विचार मंच की पहली सभा पुपरी, जिला - सीतामढ़ी (बिहार) में आयोजित की गई, जिसमें समाज के विभिन्न वर्गों के करीब 120 व्यक्ति सम्मिलित हुए। 19 व्यक्तियों ने वहीं विचार मंच की सदस्यता ग्रहण की। पुपरी के एक सम्मानित नागरिक ने इस विचार मंच की सहायता स्वरूप 5001 रुपये की सहयोग राशि दी।

(ii) 2 अक्तूबर 2009 को पुपरी के समीप के गांव एकारी में जनसभा आयोजित की गई। इस सभा में ग्रामीण किसान, शिक्षक और युवा वर्ग के लोगों ने भाग लिया। यह सभा जन-जागृति के रूप में आयोजित हुई।

(iii) 8 अक्तूबर 2009 को चंदौना, जिला दरभंगा (बिहार) में मिथिला विश्वविद्यालय के एक अंगीभूत महाविद्यालय में एक सभा हुई। सभा की अध्यक्षता महाविद्यालय के प्राचार्य ने की। इस सभा में महाविद्यालय के छात्र, छात्राओं और शिक्षकों ने भाग लिया। विचार मंच के सचिव ने इस अभियान के विचारों पर प्रकाश डाला और सवाल-जवाब के माध्यम से उनपर बहस और विचार-विमर्श हुआ।

(iv) 26 सितंबर 2010 को पटना के तारामंडल सभागार में इस अभियान की विषयवस्तु पर पटना के बुद्धिजीवियों का एक खुला अधिवेशन आयोजित किया गया, जिसमें बुद्धिजीवियों के विभिन्न वर्गों से सौ से अधिक गणमान्य व्यक्तियों ने हिस्सा लिया। इस अभियान के विचारों पर गहन विमर्श और विवेचना हुई।

(v) 26 फरवरी 2011 को पटना के अनुग्रह नारायण सिन्हा समाज अध्ययन संस्थान में एक सेमिनार आयोजित हुआ। सेमिनार के मुख्य वक्ता के रूप में डा. टी. प्रसाद ने अभियान के विचारों को प्रस्तुत किया।

(vi) 23 अप्रैल 2011 को पटना के यूथ हॉस्टल में देश प्रेम अभियान के तत्वावधान में आयोजित एक चिंतन कार्यक्रम में डा. टी. प्रसाद ने विचार मंच के विचारों को प्रस्तुत किया।

(ख) पुस्तिका:- 31 जनवरी 2009 को डा. टी. प्रसाद द्वारा लिखित 12 पृष्ठों की एक पुस्तिका **देश की दुर्दशा-चित्रण, विश्लेषण, निदान, भविष्यदृष्टि और मार्गदर्शिका** का लोकार्पण बिहार के मुख्यमंत्री श्री नीतीश कुमार द्वारा किया गया।

(ग) इलेक्ट्रॉनिक माध्यम

(i) **ब्लॉग :** (Understanding Contemporary India and its Problems) (सम-सामयिक भारत तथा इसकी समस्याओं को समझना) शीर्षक पर मई 2009 में एक ब्लॉग श्रृंखला आरंभ की गई, जिसके अंतर्गत अगस्त 2010 तक विषय से संबंधित कुल 13 ब्लॉग प्रकाशित किए गए। इन ब्लॉगों को www.postindependenceindia.blogspot.com पर देखा जा सकता है।

दूसरी ब्लॉग श्रृंखला (Emergence of a New India) (एक नये भारत का उदय) विषय पर 2 अक्तूबर 2010 को आरंभ की गई। इसके अंतर्गत 26 जनवरी 2012 तक विषय के विभिन्न आयामों से संबंधित 9 ब्लॉग लिखे गए हैं। इन ब्लॉगों को www. emergenceofanewindia,blogspot. com पर देखा जा सकता है।

(ii) वेबसाइट : Forum for Change of the System Of Governance of India (भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच) के अंग्रेजी में एक वेबसाइट (www. fcsgi.org) का प्रवर्तन अक्तूबर 2011 में हुआ। इस वेबसाइट पर अभियान और इस विचार मंच से संबंधित सभी सूचनाएं है, यथा इसकी पृष्ठभूमि, उद्देश्य, तर्काधार, वांछित शासन व्यवस्था की अवधारणा और स्वरूप, मार्गदर्शिका, भविष्य दृष्टि, संगठन, गतिविधियां, कार्यक्रम, इसमें भागीदारी के लिए आह्वान, तथा ब्लॉग एवं संपर्क सूत्र। इस अभियान को प्रश्न और उत्तर के माध्यम से समझने के लिए भी इस वेबसाइट पर सामग्री है। अभी यह वेबसाइट अंग्रेजी में है। शीघ्र ही इस वेबपेज के हिंदी संस्करण का भी प्रवर्तन होना है।

4. कार्यक्रम – अभी हम इस अभियान की प्रारंभिक अवस्था में ही हैं। गंतव्य तक रास्ता लंबा है, जिसे हम छोटा तो नहीं कर सकते, लेकिन हम अपनी गति बढ़ाकर गंतव्य तक पहुंचने के समय को तो कम किया ही जा सकता है। प्रारंभिक अवस्था की जड़ता से उबरने के बाद अपने विचारों के बल पर इस अभियान में गति आने की प्रचुर संभावना है। इस संभावना को फलित करने के लिए एक कार्यक्रम की आवश्यकता है, जिससे दो बातें सुनिश्चित हो सके। एक तो अभियान की गति तीव्र हो और दूसरा, अभियान अपने वांछित पथ से विचलित न हो। इसके मद्देनजर इस अभियान के कार्यक्रम की रूपरेखा संक्षेप में नीचे दी जा रही है:

(क) विचारों का प्रचार-प्रसार - भारतीय शासन व्यवस्था विचार मंच द्वारा संचालित अभियान के प्रथम चरण का मुख्य कार्य विचारों का प्रसार है। वर्तमान और निकट

भविष्य में इसके लिए जिन कार्यों का संपादन करना है, वे निम्नलिखित हैं:

1. विचार मंच का त्रैमासिक मुखपत्र ''राष्ट्रीय कायाकल्प'' इस प्रारंभण अंक के पश्चात आने वाले अंकों में अभियान के विभिन्न आयामों से संबंधित समाचार, इस अभियान और इसके विचारों के परिप्रेक्ष्य में देश की मौजूदा गतिविधियों की समीक्षा, अभियान की गतिविधियों की जानकारी तथा अभियान से संबंध रखने वाली अन्य बातें दी जाती रहेंगी। निकट भविष्य में विचार मंच का मुखपत्र अंग्रेजी में भी प्रकाशित करने की योजना है। अभियान और विचार मंच के सांगठनिक विस्तार के बाद जब विभिन्न राज्यों में राज्यस्तरीय कार्यालय शुरू होंगे तो क्षेत्रीय भाषाओं में भी विचार मंच के यथोचित प्रकाशन प्रकाशित किए जाएंगे।

2. अभियान के विचारों का प्रचार-प्रसार करने के लिए **इलेक्ट्रॉनिक, इंटरनेट तथा सूचना एवं संचार के अन्य माध्यमों** का भरपूर इस्तेमाल किया जाएगा। इसके अंतर्गत ब्लॉग, फेसबुक, ट्विटर इत्यादि जैसे सामाजिक माध्यमों का नियमित रूप से इस्तेमाल किया जाएगा।

3. गांव, कस्बा या शहर, हर स्तरों पर **छोटी-बड़ी सभाओं** का आयोजन कर अभियान संबंधित विचार और बातें बताई जाएंगी। लोगों को इन विचारों में शिक्षित किया जाएगा एवं उन्हें अपनी रुचि एवं योग्यता के अनुसार अभियान में सम्मिलित होकर इसे सफल बनाने के लिए अभिप्रेरित किया जाएगा।

(ख) विचारों का परिष्करण एवं परिमार्जन- इस अभियान का मुख्य आधार और विशेषता इसके विचार हैं। यद्यपि ये विचार नए नहीं, युगद्रष्टा महात्मा गांधी और अन्य गणमान्य व्यक्तियों एवं विचारकों तथा ऐतिहासिक एवं समकालीन अनुभवों से अभिप्रेरित हैं, लेकिन इन विचारों एवं अनुभवों के आधार पर एक राष्ट्रव्यापी अभियान संचालित करना और आवश्यक राजनीतिक कार्यक्रम से एक ऐसे देश, जो इतिहास में महान सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक अभियानों का साक्षी रहा है, को एक नई राह पर लाना निस्संदेह चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस चुनौती का सफलतापूर्वक सामना करने में सबसे बड़ा संबल है इसके वैचारिक आधार की संपुष्टता। इस संपुष्टता को सतत सुनिश्चित करने के लिए हमारे विचारों के परिष्करण एवं परिमार्जन की प्रक्रिया इस अभियान का एक प्रमुख अंग है। शोध, अध्ययन, बुद्धिजीवियों के विभिन्न समूहों के बीच कार्यशालाओं-डिस्कशन ग्रुपों का आयोजन और विभिन्न व्यक्तियों और संस्थाओं के साथ विचारों का आदान-प्रदान इस प्रक्रिया के माध्यम होंगे।

(ग) राजनीतिक कार्यक्रम- भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन के इस अभियान को अपने लक्ष्य तक अंततः संविधान सम्मत एक राजनीतिक कार्यक्रम के माध्यम से ही पहुंचना है। इस राजनीतिक कार्यक्रम का आधार होगा हमारे संपुष्ट विचार और उससे अभिप्रेरित जनमानस। विचार मंच द्वारा संचालित इस अभियान का यह प्रथम चरण यही आधार तैयार करेगा। इस चरण में यथोचित प्रगति के बाद अभियान का दूसरा चरण, राजनीतिक कार्यक्रम शुरू किया जाएगा। इसके तहत एक यथोचित राजनीतिक दल का गठन तथा अन्य राजनीतिक क्रिया कलाप आयोजित होंगे जो अभियान को लक्ष्य तक पहुंचाएंगे और एक नए भारत का उदय होगा।

पाठकों से

''राष्ट्रीय कायाकल्प'' में प्रतिपादित विश्लेषणों, विचारों और कायक्रमों के सम्बंध में आपके विचारों, सुझावों और प्रतिक्रियाओं का हम स्वागत करेंगे। इसके लिए आप हमसे निम्नलिखित रूप से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं -

1. सम्पादक के नाम पत्र से : पता : डा॰ टी॰ प्रसाद, 173-B, श्रीकृष्णपुरी, पटना- 800 001
2. इमेल से : पता : rashtriyakayakalp@gmail.com
3. टेलीफोन : 0612 - 2541276 (कार्यालय)
   0612 - 2541885 (आवास)
4. मोबाइल : 9431815755
5. वेब साइट :www.fcsgi.org इस वेब साइट पर आप भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन विचार मंच, जिसका मुखपत्र राष्ट्रीय कायाकल्प है, के सम्बंध में पूरी जानकारी प्राप्ति कर सकते हैं।

   (नोट : डाक अथवा इमेल से प्राप्त आपके पत्रों को पूर्ण/संक्षिप्त/ संशोधित रूप में हम अपनी सुविधा अनुसार राष्ट्रीय कायाकल्प के आने वाले अंक में यथा आवश्यक अपनी टिप्पणी के साथ प्रकाशित करेंगे)

आह्वान और अपील

हजारों वर्षों की सभ्यता और संस्कृति से संपन्न भारत का प्रायः सौ वर्षों का औपनिवेशिक शासनकाल पूर्ववर्ती शासनकालों से कुछ महत्वपूर्ण अर्थों में सर्वथा भिन्न था। इस शासनकाल में पूरे देश का शासन सात समुंदर पार एक दूसरे देश के अधीन हो गया और इस तरह भारत का हर व्यक्ति, चाहे वह किसान हो, मजदूर हो, व्यवसायी हो, सरकारी अफसर हो, जमींदार हो, किसी रियासत का राजा, महाराजा या राजकुमार हो, एक दूसरे देश का गुलाम हो गया। गुलाम देश का हर व्यक्ति जो भी करता है, अंततः वह मालिक देश के हितों की रक्षा एवं संवृद्धि ही करता है, उनपर किसी तरह की आंच लाने वाला कार्य अमान्य होता है। इस तरह की औपनिवेशिक गुलामी विश्व के इतिहास में अभूतपूर्व थी, जिसे सेना के बल से स्थाई रूप से कायम नहीं रखी जा सकती थी। इसके लिए एक ऐसी शासन व्यवस्था वांछित थी, जो एक तरफ तो यह सुनिश्चित करे कि गुलाम देश के हर व्यक्ति का काम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मालिक देश के हितों की रक्षा एवं उसकी संवृद्धि करता हो। दूसरी तरफ, उसे ऐसा करने में अपनी गुलामी का भान भी नहीं हो। यह भारत जैसे उच्च सभ्यता और संस्कृति से सम्पन्न देश के लिए विशेष महत्त्व का था। इसके लिए अंग्रेजों ने भारत में ऐसी शासन व्यवस्था संकल्पित एवं स्थापित की जो इस देश को व्यवस्थित रूप से शोषित कर सके और साथ ही साथ लोगों की नैतिकता का ह्रास भी सुनिश्चित कर सके। इस उद्देश्य के मद्देनजर इस व्यवस्था में ऐसी अवधारणा थी कि शासन और समाज बहुस्तरीय हो , जिसमें हर स्तर अपने ऊपर के स्तर से शासित और शोषित हो और अपने नीचे के स्तर का शासन और शोषण कर सके। स्पष्ट है कि इस व्यवस्था में सबसे नीचे का स्तर अंतिम रूप से शासित और शोषित होने के लिए मजबूर और अभिशप्त रहेगा। परिणामस्वरूप भारत के औपनिवेशिक शासनकाल में देश की अधिकांश जनता, जो विशेषतया गांवों में रहती थी, की स्थिति दयनीय हो गई। हजारों सालों के भारत के इतिहास में देश में गरीबी, भूखमरी, और बदहाली का ऐसा आलम कभी नहीं रहा, जैसा कि सौ सालों के औपनिवेशिक शासनकाल में हुआ। जब महात्मा गांधी भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े, और देश की जनता की दुर्दशा से रू-ब-रू हुए तो उन्हें औपनिवेशिक शासन व्यवस्था और इस दुर्दशा का प्रत्यक्ष अंतर्संबंध स्पष्ट हो गया। अतः स्वतंत्रता संग्राम का उनका लक्ष्य हो गया, ऐसी शासन व्यवस्था को हटाना, अंग्रेज चाहे रहें या जाएं। इसी लक्ष्य के प्रकाश में

भारत के इतिहास में देश में गरीबी, भूखमरी, और बदहाली का ऐसा आलम कभी नहीं रहा, जैसा कि सौ सालों के औपनिवेशिक शासनकाल में हुआ। जब महात्मा गांधी भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े, और देश की जनता की दुर्दशा से रू-ब-रू हुए तो उन्हें औपनिवेशिक शासन व्यवस्था और इस दुर्दशा का प्रत्यक्ष अंतर्संबंध स्पष्ट हो गया। अतः स्वतंत्रता संग्राम का उनका लक्ष्य हो गया, ऐसी शासन व्यवस्था को हटाना, अंग्रेज चाहे रहें या जाएं। इसी लक्ष्य के प्रकाश में उन्होंने देश की आम जनता को स्वतंत्रता संग्राम से जोड़ा, जिससे यह संग्राम जो पहले उच्च मध्यमवर्ग तक सीमित था, जनसंग्राम बन गया।

उन्होंने देश की आम जनता को स्वतंत्रता संग्राम से जोड़ा, जिससे यह संग्राम जो पहले उच्च मध्यमवर्ग तक सीमित था, जनसंग्राम बन गया।

चूँकि औपनिवेशिक शासन व्यवस्था में ही अंग्रेजों का निहित स्वार्थ था, वे ऐसी व्यवस्था को छोड़ नहीं सकते थे, फलतः उन्हें भारत छोड़ना पड़ा। इस तरह भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता मिल गई, जिसके चलते हम इस शोषणकारी और अनैतिकतापरक शासन व्यवस्था को हटाकर भारत की प्रतिभा के अनुरूप और इसको प्रस्फुटित तथा विकसित करने और समृद्धि लाने वाली शासन व्यवस्था ला सकते थे। लेकिन इस शासन व्यवस्था में भारत के लाभान्वित वर्गों के निहित स्वार्थ और गांधी जी के शीर्ष अनुयायियों का उनके विचारों के प्रति अपूर्ण आस्था के चलते तथा निवर्तमान अंग्रेजी शासन की मिलीभगत से स्वतंत्र भारत में मूलतः वही शासन व्यवस्था अपना ली गई, जिसको हटाना ही हमारे स्वतंत्रता संग्राम का लक्ष्य था। इस तरह स्वतंत्र भारत में भारतीय गणतंत्र को हमारे संविधान के द्वारा जिस रास्ते पर चलना सुनिश्चित किया गया उससे स्वतंत्रता संग्राम के नायक महात्मा गांधी की घोर उपेक्षा, स्वतंत्रता संग्राम के लाखों बलिदानियों के प्रति विश्वासघात और करोड़ो भारतीयों के सपनों और अपेक्षाओं पर कुठाराघात हुआ। इस रास्ते पर छह दशकों से अधिक की भारतीय गणतंत्र की यात्रा में भ्रष्टाचार, राजनीतिक नैतिकता का घोर पतन, गरीबी तथा गरीब-अमीर की बढ़ती खाई तथा सामाजिक अशांति और अंतर्विद्रोह से ग्रस्त भारत का जो विकृत स्वरूप उभरा है और जिस तरह यह विकृति समय के साथ बढ़ती ही गई है उससे निर्विवाद रूप से स्पष्ट होना चाहिए कि भारतीय गणतंत्र सही रास्ते पर नहीं है। ऐसे रास्ते पर चलने पर भारत की विकृति और दुर्गति की स्पष्ट आशंका युगद्रष्टा महात्मा गांधी ने व्यक्त की थी और चेतावनी भी दी थी। जबतक हमारा गणतंत्र सही रास्ते पर नहीं आता, हम लाख प्रयत्न करें, हम इसकी विकृति को नहीं दूर कर सकते और इसकी दुर्गति को राक नहीं सकते। ऐसा हमारा अनुभव भी रहा है । और यह भी है कि जब हमारा गणतंत्र सही रास्ते पर प्रतिस्थापित होगा तो अपनी सांस्कृतिक विरासत, प्रतिभा और संसाधन के बल पर सुख और समृद्धि की राह पर इसके निरंतर अग्रसर होने से कोई रोक भी नहीं सकता। इतिहास इसका साक्षी है।

हमारा यह अभियान ऐसी भारतीय शासन व्यवस्था के परिवर्तन का अभियान है। इस अभियान की सफलता का सबसे ज्यादा प्रभाव भारत के गांवों पर होगा। दशकों बाद भारत की स्वतंत्रता गांवों तक पहुंचेगी। अतः हम ग्रामवासियों से विशेष रूप से आह्वान करते हैं कि वे इस अभियान में सम्मिलित हों और इसे सफलता की मंजिल तक ले जाने में तन-मन-धन से सहयोग करें।

अतः भारत की चीखती पुकार है कि इस गणतंत्र को सही रास्ते पर लाया जाय। और इसका एकमात्र उपाय है इसका शासन व्यवस्था परिवर्तन। अतः भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन के इस ऐतिहासिक अभियान में शामिल होने के लिए हम सभी भारतीयों का आह्वान करते हैं। भारत का हर नागरिक, चाहे वह इसके किसी वर्ग से संबंध रखता हो, या उसका प्रतिनिधित्व करता हो, इस अभियान में अपना योगदान दे सकता है। इस अभियान का तार्किक आधार, लक्ष्य, लक्ष्य प्राप्ति की मार्गदर्शिका और लक्ष्य प्राप्त भारत की भविष्य दृष्टि सुस्पष्ट है। आप इसे समझें, इस अभियान में सम्मिलित हों, और एक नए भारत के उदय में अपना योगदान दें। यह योगदान कई रूपों और कई स्तरों पर दिया जा सकता है। पहला तो यह है कि इस अभियान को पूर्ण रूप से समझें। इसके लिए आप इस पत्रिका, वेबसाइट और ब्लॉग का उपयोग कर सकते हैं। दूसरा, इसका सदस्य बन कर इसके विभिन्न कार्यों में सहयोग कर सकते हैं। तीसरा, इस अभियान के लिए आर्थिक सहयोग देकर इसके राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम को आगे बढ़ाने में सहायता कर सकते हैं। इस अभियान के दूसरे चरण में राजनीतिक कार्यक्रमों में भाग लेकर इस को अपने लक्ष्य तक ले जाने में सहभागी बन सकते हैं। इसके लिए हम भारत के विभिन्न वर्गों के नागरिकों से विशेष अपील करते हैं:

1. वरिष्ठ नागरिकों से

आपने अबतक के अपने जीवन काल में शिक्षा, बुद्धिमत्ता, मेहनत या अपनी अन्य उपलब्धियों के आधार पर अपने परिवार, समाज और देश के प्रति अपना कर्तव्य निभाया है। ऐसा आपने इसी शासन व्यवस्था के तहत किया है,

क्योंकि आप किसी न किसी रूप में इस व्यवस्था से संबद्ध रहे थे, इसमें प्रत्यक्ष रूप से भागीदारी करके या अप्रत्यक्ष रूप से इससे प्रभावित होकर। आपकी गतिविधियां और कृतियां बहुत हद तक इस व्यवस्था से प्रभावित और संचालित रही थीं।

अब जब आप इस व्यवस्था से प्रत्यक्ष रूप से बाहर और ऊपर हैं, इसकी खूबियों, खामियों और विसंगतियों के अनुभव के आधार पर शासन व्यवस्था परिवर्तन के इस अभियान की अनिवार्यता और तार्किकता को समझने में आप विशेष रूप से योग्य हैं। अधिकांश वरिष्ठ नागरिक अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों से भी मुक्त या मुक्तप्राय हो चुके रहते हैं। इस स्थिति में इस अभियान में योगदान करने के लिए वरिष्ठ नागरिकों का वर्ग विशेष महत्वपूर्ण और अनन्य रूप से उपयुक्त है।

वर्तमान की उन्नत दीर्घायुता और स्वास्थ्य संबंधित सजगता और अवसर को देखते हुए इस अभियान में इस वर्ग से यथेष्ट योगदान अपेक्षित है। भारत के भविष्य को मौलिक रूप से प्रभावित करने वाले इस अभियान से जुड़ने में तथाकथित अवकाशप्राप्त या वाणप्रस्थ जीवन की सार्थकता भी तो बढ़ जाती है। समाज से लेने का समय तो जा चुका, जीवन के इस काल में समाज को देने की ही तो अहमियत है।

इन बातों के मद्देनजर हम वरिष्ठ नागरिकों से इस अभियान में सम्मिलित होने के लिए आह्वान करते हैं और अपील करते हैं कि इसमें वे तन-मन-धन से योगदान दें।

2. युवाओं से

भारत का विशाल युवा वर्ग देश की शक्ति भी है और संसाधन भी। इसी शक्ति और संसाधन के उपयोग से ही देश का सर्वांगीण विकास किया जा सकता है। लेकिन यह तभी संभव है जब देश की शासन व्यवस्था, जो देश की अन्य व्यवस्थाओं और गतिविधियों को भी प्रभावित और संचालित करती है, उपयुक्त हो। यदि शासन व्यवस्था अनुपयुक्त, प्रतिगामी और शोषणपरक हो, जैसा कि वर्तमान शासन व्यवस्था है, तो इस शक्ति और संसाधन का अनुचित उपयोग ही होगा, जिससे देश में शोषणकारी शक्तियां और मजबूत होंगी, शोषण और गहरा और व्यापक होगा, देश का विकास असंतुलित होगा तथा बेकारी और बेरोजगारी बढ़ेगी। यह विडंबना ही है कि जिस देश को विकास का एक लंबा रास्ता तय करना हो, उस देश में युवा शक्ति बेकार या बेरोजगार हो। भ्रष्टाचार, व्यभिचार और राजनीतिक नैतिकता का घोर पतन जैसी हमारे राष्ट्रीय जीवन की विकृतियां इसी शासन व्यवस्था की देन हैं। इन विकृतियों से क्षुब्ध युवाओं का आक्रोश और उद्वेलन तो स्वाभाविक है और सराहनीय भी है। लेकिन महत्वपूर्ण है इनका प्रभावी निराकरण। इन विकृतियों के खिलाफ कोई भी कदम और कोई भी कानून इसी कसौटी पर परखा जाना चाहिए। यदि वह इस कसौटी पर खरा नहीं उतरता तो संबंधित आंदोलन देश और समाज के लिए प्रतिगामी ही सिद्ध होगा। इस आलोक में हम भारत के युवाओं का आह्वान करते हैं कि वे भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन के इस अभियान को समझें, इस कसौटी पर इसे परखें, इसमें शरीक हों, इसका हिस्सा बनें और इसे गति दें।

3. ग्रामवासियों से

भारत गांवों में बसता है, भारत की आत्मा गांवों में बसती है - ऐसी बातें किसी न किसी संदर्भ में हमेशा कही जाती रही हैं। क्या है इन बातों का अर्थ, क्या है इन बातों की वास्तविकता? क्या सिर्फ यही कि भारत की 70 प्रतिशत आबादी गांवों में बसती है? इस पर थोड़ा गौर करने की जरूरत है।

हजारों सालों से भारत विश्व के समृद्धतम देशों में एक रहा था। यह समृद्धि सर्वव्यापी, भारत की हर आबादियों में, तत्कालीन गांवों या शहरों में। प्रायः दो सौ साल पूर्व भारत में शोषणात्मक औपनिवेशिक शासन व्यवस्था आने के बाद स्थिति बदल गई। देश के शोषण का अंतिम रूप से और अधिकतम लाभ तो ब्रिटिश सरकार को था, लेकिन शोषण में सहयोग एवं सहायता देने वाले बहुत से भारतीय भी इससे लाभान्वित हुए। सहयोग एवं सहायता की महत्ता के अनुसार ये भारतीय छोटे या बड़े शहरों में रहते थे। वास्तव में भारत में इन शहरों का आविर्भाव भी इसी शोषणात्मक क्रम में हुआ। इस व्यवस्था में गांव अंतिम और विशुद्ध रूप से शोषित था। औपनिवेशिक शासन के शोषण का सारा भार, ब्रिटिश शासकों का सारा लाभ तथा भारतीय सहयोगियों एवं सहायकों का आंशिक लाभ गांव के लोग अपने शोषण के द्वारा वहन करते थे। जबकि पूरा भारत ही औपनिवेशिक शोषण के फलस्वरूप गरीबी और बदहाली की ओर

बढ़ता गया, गावों की दशा विशेष रूप से दयनीय हो गई। जब महात्मा गांधी स्वतंत्रता संग्राम में आए और इस स्थिति से रू-ब-रू हुए तो उनके सामने साफ था कि भारत की गरीबी और विशेष रूप से गांवों की दुर्दशा औपनिवेशिक शासन व्यवस्था के चलते थी और इसलिए इस शासन व्यवस्था को हटाना ही स्वतंत्रता संग्राम का लक्ष्य बन गया, अंग्रेज चाहें रहें या जाएं। वे कहते थे कि भारत की स्वतंत्रता का अर्थ इसके सात लाख गांवों की स्वतंत्रता है, हर गांव एक गणराज्य होगा, यानी हर गांव की अपनी स्वायत्त सरकार होगी। स्वतंत्र भारत में विकास की धारा गांवों से फूटेगी, न कि दिल्ली से चलकर आएगी। लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा न हो सका और गांधी का सपना पूरा नहीं हुआ। ऐसा इस कारण नहीं हो सका कि स्वतंत्र भारत में भी वही शोषणात्मक शासन व्यवस्था अपना ली गई, जिसके कारण गांवों की दुर्दशा हुई थी। लंदन से चलकर भारत की स्वतंत्रता 15 अगस्त 1947 को दिल्ली पहुंची और 26 जनवरी 1950 को संविधान के रास्ते राज्यों की राजधानियों में पहुंची। गांवों तक स्वतंत्रता का आना, जो हमारी स्वतंत्रता आंदोलन का लक्ष्य था, अभी तक नहीं हुआ। आजादी के 45 वर्षों बाद 1992 में संविधान संशोधन कर जो पंचायती राज व्यवस्था लायी गई है वह गांवों की स्वतंत्रता और ग्राम गणराज्य की कल्पना से कोसों दूर है।

हमारा यह अभियान ऐसी भारतीय शासन व्यवस्था के परिवर्तन का अभियान है। इस अभियान की सफलता का सबसे ज्यादा प्रभाव भारत के गांवों पर होगा। दशकों बाद भारत की स्वतंत्रता गांवों तक पहुंचेगी। अत: हम ग्रामवासियों से विशेष रूप से आह्वान करते हैं कि वे इस अभियान में सम्मिलित हों और इसे सफलता की मंजिल तक ले जाने में तन-मन-धन से सहयोग करें।

हमारा यह अभियान ऐसी भारतीय शासन व्यवस्था के परिवर्तन का अभियान है। इस अभियान की सफलता का सबसे ज्यादा प्रभाव भारत के गांवों पर होगा। दशकों बाद भारत की स्वतंत्रता गांवों तक पहुंचेगी। अत: हम ग्रामवासियों से विशेष रूप से आह्वान करते हैं कि वे इस अभियान में सम्मिलित हों और इसे सफलता की मंजिल तक ले जाने में तन-मन-धन से सहयोग करें।

4. शहरवासियों से

भारत में शहरों का आविर्भाव मुख्यतया ब्रिटिश शासनकाल में हुआ और इनके विकास पर भी शासनतंत्र की छाप और प्रभाव स्पष्ट रहा है। जिस स्थान पर औपनिवेशिक शासन की इकाई स्थापित हुई, सरकारी तंत्र के लोग आए, इस तंत्र से संबद्ध अन्य पेशों के लोग आए, इन लोगों के लिए मूलभूत और आवश्यक सेवाएं आईं और उनसे जुड़े लोग आए, और इस तरह वह स्थान धीरे-धीरे शहर बन गया। शासन की इकाई के अधिकार क्षेत्र के हिसाब से शहर छोटा या बड़ा बना। विकास की इस प्रक्रिया में शहरवासियों में एक दूसरे से जुड़े होने का भाव नहीं आ सकता। यही कारण है कि किसी भी शहर की अपनी एक सामाजिक व सांस्कृतिक पहचान नहीं बन सकी, जैसा कि भारत के हर गांव की है। ऐसी पहचान के अभाव में किसी शहर का सर्वांगीण विकास नहीं हो सकता। वर्तमान शासन व्यवस्था में ऐसी पहचान बनना और ऐसा विकास होना संभव नहीं है। शहर में यदि गंदी बस्तियां या झोपड़पट्टियां अस्तित्व में आएं तो शहरवासी इसमें असहाय हैं। परिवर्तित शासन व्यवस्था में शहरी जीवन में गुणात्मक सुधार और अपनी पहचान के अनुसार शहर का समुचित विकास होगा।

देश और समाज के व्यापक हित में इस अभियान का जो महत्व है उसे शहरवासी ज्यादा अच्छी तरह समझ सकते हैं। इस अभियान में शामिल होने के लिए हम उनका विशेष रूप से आह्वान करते हैं।

5. आदिवासियों से

हजारों वर्ष के भारतीय इतिहास में यहाँ विभिन्न सम्प्रदायों, मतावलंबियों और प्रजातियों के लोग विभिन्न ऐतिहासिक परिस्थितियों और कारणों से आते रहे हैं। जो लोग यहाँ बस गए और जिन लोगों ने इस देश को अपना बना लिया, भारत ने भी उन्हे अपना लिया। यह इस देश की परम्परा रही है और हमारी सभ्यता और संस्कृति इसी समागम से समृद्ध हुई है। इस परम्परा में दो बातें क्रियाशील रही हैं, एक तो अपने सम्प्रदाय, मत और अपनी प्रजातीय विशिष्टता को अक्षुण्ण रखने की पूर्ण स्वतंत्रता और दूसरी, भारतीय जीवन की मुख्य धारा में आने का पूरा अवसर। औपनिवेशिक शासन काल में

शोषणात्मक और अनैतिकता-परक शासन व्यवस्था और ''बाँटो और राज करो'' की नीति के कारण यह परम्परा बाधित हुई है। स्वतत्र भारत में भी उसी शासन व्यवस्था और फलस्वरूप उसी नीति को कायम रखने के चलते भारत की यह परम्परा अभी तक लौट नहीं पायी है, जो न ऐसे लोगों के लिए वांछनीय है, न भारत के लिए। परिवर्त्तित शासन व्यवस्था में यह परम्परा अपने शुद्ध रूप में फिर लौटेगी और इस देश की पहचान बनेगी। इसके लिए हम आदिवासियों से अपील करते हैं कि वे इस अभियान में शामिल हों और इसे सफल बनाने में योगदान दें।

6. बुद्धिजीवियों से

आप अपनी बुद्धि और ज्ञान के उपयोग से विभिन्न पेशों के जरिए देश और समाज की सेवा करते हैं और अपने परिवार के प्रति भी इसी माध्यम से अपने दायित्वों का निर्वहन करते हैं। इस अभियान के वैचारिक आधार को समझने-बूझने की आप में स्वाभाविक क्षमता है। हम आह्वान करते हैं कि आप इस अभियान में शरीक हों इसके वैचारिक आधार को दृढता प्रदान करें तथा इन विचारों को प्रचारित और प्रसारित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान करें।

7. राजनीतिजीवियों से

आज के युग में और विशेषतया अपने देश में राजनीति पूर्ण रूप से इस कदर सत्ता केंद्रित हो गई है कि राजनीति का अपना कोई वजूद ही नहीं रह गया है। यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है। राजनीति तो समाज को संचालित करने की दिशा प्रदान करती है जबकि सत्ता इस संचालन का माध्यम मात्र है। लेकिन जब सत्ता ही राजनीति को संचालित करने लगे तो समझना चाहिए कि देश और समाज ठीक रास्ते पर नहीं है और उल्टी धारा बह रही है। राजनीतिक स्वरूप की इस विकृति का विश्लेषण मार्गदर्शक होगा।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम मुख्यत: राजनीतिक संग्राम था। इस संग्राम के नायक महात्मा गांधी ने सत्य, अहिंसा और नैतिकता पर आधारित राजनीति के जिस स्तर पर इस संग्राम को संचालित किया उसने न सिर्फ करोड़ो भारतीयों को इसमें शामिल होने के लिए अभिप्रेरित किया, बल्कि अपने तथाकथित दुश्मनों को भी हतप्रभ कर दिया। यक्ष प्रश्न है कि स्वतंत्रता संग्राम के समय की उच्चस्तरीय राजनीति की विरासत वाली स्वतंत्र भारत की राजनीति में इतनी गिरावट क्यों आयी। हमारा स्वतंत्रता संग्राम मूल रूप से शोषणकारी और अनैतिकता को बढ़ावा देने वाली औपनिवेशिक शासन व्यवस्था के खिलाफ था और उसका उद्देश्य ऐसी शासन व्यवस्था को हटाना था। लेकिन दुर्भाग्यवश स्वतंत्र भारत में भी मूलत: वही शासन व्यवस्था अपना ली गई। सत्ता का स्वरूप वही रहा जो औपनिवेशिक शासनकाल में था। फलस्वरूप राजनीति का स्वरूप बदल गया, राजनीति विकृत हो गई।

भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन के इस अभियान का लक्ष्य है, भारत में नई शासन व्यवस्था लाना और सत्ता का स्वरूप बदल देना। नई व्यवस्था में सत्ता शोषण और अनैतिकता के सम्पोषण के लिए नहीं होकर देश के विकास और जनता की सेवा का माध्यम होगी। ऐसी व्यवस्था में राजनीति का स्वरूप स्वत: बदल जाएगा। राजनीति ऐसे विचारवान लोगों को आकर्षित करने लगेगी जो देश और समाज को एक समुचित दिशा देना चाहते हों, जिससे उनकी दशा ठीक हो।

इस परिप्रेक्ष्य में हम भारत के सभी राजनीतिजीवियों को शासन व्यवस्था परिवर्तन के इस अभियान में सम्मिलित होने का आह्वान करते हैं।

8. किसान-मजदूरों से

देश की भौतिक संपदा या तो खेतों से आती है या कल-कारखानों से। इन दो मौलिक स्रोतों से भौतिक संपदा पैदा करने में किसानों और मजदूरों का सीधा हाथ है। लेकिन देश में प्रचलित शासन व्यवस्था और इससे संचालित होने वाली आर्थिक, प्रशासनिक या अन्य व्यवस्थाएं ऐसी हैं कि उन्हें उनके योगदान का न्यायपूर्ण प्रतिफल नहीं मिलता। परिवर्तित शासन व्यवस्था और संबद्ध अन्य व्यवस्थाएं स्थापित होने पर किसान-मजदूर और अन्य समूह जो देश की भौतिक संपदा पैदा करने में प्रत्यक्ष योगदान करते हैं, अपना समुचित प्रतिफल पाएंगे जिससे उनकी दशा में अभूतपूर्व परिवर्तन होगा। वर्तमान में उनकी दयनीय दशा शोषणात्मक व्यवस्था के फलस्वरूप है और जबतक यह व्यवस्था रहेगी उनकी स्थिति में कोई ठोस और टिकाऊ सुधार संभव नहीं है। इस दृष्टिकोण से हम देश के किसान-मजदूरों का आह्वान करते हैं कि वे अपने और देश के व्यापक हित को ध्यान में रखते हुए इस अभियान में सम्मिलित हों।

9. वंचित वर्गों से

देश और समाज में कई वर्ग ऐसे हैं जो समझते हैं या महसूस करते हैं कि

अभी जो व्यवस्था है - शासन व्यवस्था और उससे प्रभावित या संचालित अन्य व्यवस्थाएं - उसमें उनकी कोई प्रभावकारी भागीदारी नहीं है, उनका दु:ख-दर्द देखने या उनकी आवाज सुनने वाला कोई नहीं है, उनका हक उन्हें नहीं मिल रहा है। ऐसी भावना से ग्रसित यह वर्ग या तो समाज के हाशिए पर रहने को अपने को अभिशप्त समझता है या ऐसी व्यवस्था से विद्रोह कर अपनी एक अलग व्यवस्था बना लेना और उसे अपने नियमों से संचालित करना अपना अधिकार समझ लेता है। अपने इस अधिकार की रक्षा के लिए वह हिंसा के इस्तेमाल से भी नहीं परहेज करता। ऐसी भावना की उत्पत्ति का सामाजिक, आर्थिक या ऐतिहासिक जो भी विश्लेषण हो, इस भावना से ग्रस्त वर्ग की प्रतिक्रियात्मक गतिविधियों के औचित्य पर जो भी प्रश्नचिह्न लगे, यह निर्विवाद है कि ऐसी भावना देश और समाज के हित में नहीं है।

परिवर्तित शासन व्यवस्था में ऐसी भावना पनपने का आधार ही खत्म हो जाएगा। ऐसी व्यवस्था में समावेशी विकास के लिए अलग से कोई नीति बनाने की जरूरत नहीं होगी, व्यवस्था ही समावेशी होगी, जिसमें कोई वर्ग वंचित रह ही नहीं सकता। देश में ऐसी व्यवस्था लाने और स्थापित करने के लिए हम समाज के उन वर्गों से, जो वर्तमान व्यवस्था में किसी न किसी रूप से अपने को वंचित महसूस करते हैं, भी अपील करते हैं कि वे शासन व्यवस्था परिवर्तन के इस अभियान में सम्मिलित हों और सहयोग करें जिससे देश में समावेशी व्यवस्था स्थापित हो सके।

10. लाभान्वित वर्गों से

वर्तमान शासन व्यवस्था मूलत: वही शासन व्यवस्था है जो एक संसाधन समृद्ध उपनिवेश का शोषण और उसकी संस्कृति संपन्न जनता का नैतिक अधोपतन सुनिश्चित करने के लिए बनाई और प्राय: सौ सालों तक इस्तेमाल की गई थी।

अत: तर्कसंगत है कि स्वतंत्र भारत की इस व्यवस्था में भी शोषण और नैतिक अधोपतन का तत्व तो रहेगा ही। औपनिवेशिक शासनकाल में इन तत्वों से मुख्य रूप से तो शासक देश लाभान्वित था, लेकिन उसी क्रम में शासित देश के बहुत से वर्ग, जो इस व्यवस्था में सहायक, सहयोगी या सहभागी थे, भी लाभान्वित हुए। इन लाभों का भार भारत का विशाल जनसमुदाय अपने शोषण के माध्यम से वहन करता था। स्वतंत्र भारत में मूलत: वही शासन व्यवस्था उसी तरह की सामाजिक एवं आर्थिक प्रक्रिया को पैदा और पोषित करती है। देश और समाज में पहले की तरह ही शोषित जनसमुदाय, लाभान्वित वर्ग और नैतिक अधोपतन का परिदृश्य है। बदला है तो सिर्फ शोषण, लाभान्विति और नैतिक ह्रास की प्रक्रिया, स्वरूप और पैमाना। आज भी लाभान्विति शोषण पर आधारित और अनैतिकता की जनक और पोषक है। परिवर्तित शासन व्यवस्था में भी लाभान्वितों का विशाल वर्ग होगा, लेकिन लाभान्विति में शोषण और अनैतिकता का पुट नहीं रहेगा। व्यक्तियों और वर्गों की लाभान्विति देश के विकास और समृद्धि के साथ जुड़ी रहेगी। लाभान्वितों के प्रति समाज में सम्मान का भाव होगा।

आज के लाभान्वित वर्गों का आने वाली पीढ़ियों के प्रति एक नैतिक दायित्व है कि देश और समाज में लाभान्विति का ऐसा परिदृश्य लाएं और यह शासन व्यवस्था परिवर्तन से ही संभव है, किसी कानून से नहीं। अत: लाभान्वित वर्ग का हम विशेष रूप से आह्वान करते हैं कि वे इस अभियान को सफल बनाने में योगदान दें।

11. छात्रों, शिक्षकों, और अभिवावकों से

देश की शासन व्यवस्था ही यहां की शिक्षा व्यवस्था को निर्धारित और प्रभावित करती है। यदि हम वर्तमान शासन व्यवस्था के तहत देश में व्याप्त शिक्षा व्यवस्था और परिदृश्य पर विश्लेषणात्मक दृष्टिपात करें तो निम्नलिखित बातें निश्चित रूप से उभरती हैं:

(i) प्राथमिक विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालय तक शिक्षा मुनाफा प्रेरित एक व्यापार बन चुकी है और निवेश का एक आकर्षक क्षेत्र बन गई है।

(ii) गांव से शहर तक के बच्चे विभिन्न गुणात्मक स्तरों के विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण करते हैं और यह स्तरीकरण उनकी उच्च शिक्षा और उनके कॅरियर को भी प्रभावित करता है। अत: हम शिक्षा के माध्यम से विभिन्न स्तरों के नागरिकों का निर्माण करते हैं और यह स्तरीकरण मेधा आधारित नहीं है। देश की दशा और दिशा पर इस स्तरीकरण का नकारात्मक प्रभाव स्वाभाविक है, जो देश के भविष्य के लिए शुभसंकेत नहीं है।

(iii) किसी भी शासन व्यवस्था के तहत हम इस मकसद और अपेक्षा से

सरकार बनाते हैं कि वह हमारी सार्वजनिक मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करे। बच्चों की स्कूली शिक्षा भी एक ऐसी ही मूलभूत आवश्यकता है। लेकिन हर अभिभावक अपने बच्चे की प्रारंभिक शिक्षा के लिए चिंतित और परेशान रहता है। फिर, स्कूल में बच्चा किस गुणवत्ता की शिक्षा, किस माहौल में, किन भौतिक सुविधाओं एवं असुविधाओं के साथ पाता है, इसको सुनिश्चित करने में उसकी कोई भागीदारी या भूमिका नहीं है।

(iv) छात्रों के अध्ययन में विषय क्षेत्र का चयन उनकी प्रतिभा और रुचि के आधार पर न होकर वैश्विक बाजार की मांग पर निर्भर करता है। ऐसी बाजारोन्मुख शिक्षा से हम स्तरीय वैज्ञानिक, इंजीनियर, चिकित्साशास्त्री, अर्थशास्त्री या साहित्यकार नहीं पैदा कर सकते। यह सोचनीय बात है कि गणतंत्र भारत के इन साठ सालों में एक भी भारतीय नोबल पुरस्कार विजेता नहीं हुआ। ज्ञान आधारित और ज्ञान परिचालित वैश्विक समाज में यह स्थिति चिंतनीय है।

देश में उभरता शिक्षा का यह परिदृश्य वर्तमान शासन व्यवस्था के चलते है। इस व्यवस्था में इसमें किसी गुणात्मक सुधार की आशा नहीं की जा सकती। परिवर्तित शासन व्यवस्था में शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन होगा, जो देश और समाज की दशा और दिशा बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। शिक्षा से संबंधित समाज के विभिन्न वर्गों और व्यक्तियों से अपील है कि इस अभियान से जुड़कर इसे सफल बनाएं।

12. प्रवासी भारतीयों से

सदियों से विभिन्न कारणों से भारत के लोग दुनिया के विभिन्न देशों में गए हैं और कालक्रम में वहीं बस गए हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी कमोबेश यह सिलसिला चलता रहा है। सूचना, संचार और परिवहन के क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन, विश्व का उभरता आर्थिक परिदृश्य या भारत के जीवनयापन की विभिन्न विकृतियों के फलस्वरूप हाल के दशकों और वर्षों में इस सिलसिले में और भी गति आई है, और विदेश पलायन बहुत से भारतीय परिवारों के जीवन का अंग और अनुभव बन चुका है। यह एक तथ्य है कि भारत से निकले हुए इन लोगों और परिवारों के मन से भारत कभी नहीं निकला है। भारत के सुख-दु:ख से वे खुश या दु:खी अवश्य होते हैं।

स्वतंत्रता के बाद साठ से अधिक वर्ष बीतने पर भी भारत की छवि जो अभी उभरी है वह हमारी आकांक्षाओं और अपेक्षाओं के विपरीत है। राजनीति के क्षेत्र में नैतिकता का पतन, सार्वजनिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार, आर्थिक स्थिति में बढ़ती गरीबी और विषमता तथा सामाजिक जीवन में अशांति और अंतर्विद्रोह से देश आक्रांत है। समय के साथ स्थिति बद से बदतर ही हुई है। तमाम सरकारी प्रयत्न, चाहे किसी भी दल की सरकार हो, या शीर्ष पर कोई भी नेता हो, विफल रहे हैं। जनता के आक्रोश से उत्पन्न कतिपय आंदोलन भी कोई टिकाऊ प्रभाव नहीं ला सका। ये प्रयत्न और आंदोलन इसलिए विफल रहे कि वर्तमान शासन व्यवस्था के तहत ही समाधान ढूँढ़ने की कोशिश की जाती रही है। जब यह व्यवस्था ही समस्याओं की जड़ में है तो फिर मुख्य समस्या तो यह शासन व्यवस्था ही है। हमारे इस अभियान का मकसद इसी मुख्य समस्या से निपटना है। हमारा मकसद है, वर्तमान शासन व्यवस्था बदल कर एक ऐसी शासन व्यवस्था स्थापित करना, जिसमें व्यवस्थाजनित ये समस्याएं उत्पन्न ही नहीं होंगी । यह एक ऐसी व्यवस्था होगी, जिसमें भारत की प्रतिभा प्रस्फुटित होगी और भारत अपने संसाधनों के बल पर समृद्ध होगा, न कि शोषण का शिकार होगा।

हमारे स्वतंत्रता संग्राम का लक्ष्य ऐसी ही शासन व्यवस्था लाना था। लेकिन दुर्भाग्यवश 15 अगस्त 1947 को राजनैतिक स्वतंत्रता मिलने के बाद हम रास्ते से भटक गए। हम भूल गए कि भारत की वास्तविक स्वतंत्रता या भारत की पूर्ण स्वतंत्रता के पथ पर यह राजनैतिक स्वतंत्रता तो एक शर्त थी, एक पड़ाव था। पड़ाव पर आकर हम अपने गंतव्य को भूलकर विश्रामगृह को अपना घर समझ बैठे। पड़ाव से आगे का रास्ता तो औपनिवेशिक शासन व्यवस्था के परिवर्तन का था, जो हमने महात्मा गांधी के निर्देशन के बावजूद नहीं किया।

हमारा यह अभियान है भारत की पूर्ण स्वतंत्रता की ओर बढ़ने का, वह स्वतंत्रता जिसको स्वतंत्रता संग्राम के नायक महात्मा गांधी ने परिभाषित किया था, वह स्वतंत्रता जिसके लिए लाखों स्वतंत्रता सेनानियों ने बलिदान दिया था, वह स्वतंत्रता जिसकी अपेक्षा करोड़ों भारतीयों ने की थी। इस अभियान में

सम्मिलित होने के लिए हम प्रवासी भारतीयों का आह्वान करते हैं और अपील करते हैं कि वे तन-मन-धन से इसमें सहयोग करें। यहाँ यह कहना प्रासंगिक है कि भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी प्रवासी भारतीयों ने सक्रिय भूमिका निभाई थी। आज से सौ साल पहले भारत की स्वतंत्रता के लिए उन्होंने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के पश्चिमी क्षेत्र में एक क्रांतिकारी पार्टी भी स्थापित की थी जिसका नाम गदर पार्टी था। इंग्लैंड, दक्षिण अफ्रीका और कुछ अन्य देशों में भी भारत को स्वतंत्र करने के लिए बहुत से कार्यक्रम, गतिविधियां और प्रयास किए गये थे।

शासन व्यवस्था परिवर्त्तन का यह अभियान उसी स्वतंत्रता संग्राम की कड़ी के रूप में है। उस स्वतंत्रता संग्राम की अधूरी उपलब्धि को पूरी करने का अभियान है यह। प्रवासी भारतीयों की भूमिका इस में भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है।

13. लोकहितैषी दाताओं से

हमारे देश की यह परंपरा रही है कि यहाँ बहुत से व्यक्ति, जैसे व्यवसायी और अन्य पेशों में लगे लोग, अपने अर्जित धन का एक भाग परमार्थ और समाज के काम के लिए दान देते हैं। जिस काम के लिए ऐसा दान दिया जाता है वह कितना उपयोगी सिद्ध होता है वह इस बात पर निर्भर करता है कि उस काम को संचालित करने वाली व्यवस्था और अंततः इसे प्रभावित करने वाली देश की शासन व्यवस्था कैसी है। यदि देश की शासन व्यवस्था दोषपूर्ण और अवांछनीय है और देश सही राह पर नहीं है तो ऐसा धन या तो पूर्ण प्रभावी नहीं हो पाता या गलत काम में भी इसके इस्तेमाल होने की संभावना रहती है। जब देश सही राह पर नहीं हो, जैसी वर्त्तमान स्थिति है, तो इसे सही रास्ते पर लाने वाला कोई विश्वसनीय प्रतिबद्ध प्रयास देश का बहुत बड़ा और महत्त्व का यज्ञ या अनुष्ठान बन जाता है।

हमारे स्वतंत्रता संग्राम का लक्ष्य ऐसी ही शासन व्यवस्था लाना था। लेकिन दुर्भाग्यवश 15 अगस्त 1947 को राजनैतिक स्वतंत्रता मिलने के बाद हम रास्ते से भटक गए। हम भूल गए कि भारत की वास्तविक स्वतंत्रता या भारत की पूर्ण स्वतंत्रता के पथ पर यह राजनैतिक स्वतंत्रता तो एक शर्त थी, एक पड़ाव था। पड़ाव पर आकर हम अपने गंतव्य को भूलकर विश्रामगृह को अपना घर समझ बैठे।

स्वामी विवेकानंद के विचारों से प्रभावित, महात्मा गांधी के विचारों पर आधारित और देश के अन्य महान विभूतियों की आकांक्षाओं से अनुप्रेरित भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्त्तन का यह अभियान स्वतंत्रता संग्राम के बलिदानियों और करोड़ों भारतीयों के सपने को साकार करने का एक महत्त्वपूर्ण यज्ञ है। यह लोकहित में प्रायोजित यज्ञ है। इस यज्ञ को सम्पन्न करने में बहुत धन और द्रव्य की आवश्यकता है। हम भारत के परमार्थ दाताओं से विशेष अपील करते हैं कि इस यज्ञ की सफलता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक धन और द्रव्य का दान करें।

भारत के हर नागरिक से अपील

- भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन अभियान को आप समझें।
- इसके लिए आप राष्ट्रीय कायाकल्प, भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन मंच वेबसाइट और ब्लॉग का इस्तेमाल कर सकते हैं।
- संस्था का सदस्य बनकर इसके विभिन्न कार्यों में सहयोग करें।
- आर्थिक सहयोग कर राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम को आगे बढ़ाएं।

सम्पर्क करें

भारतीय शासन व्यवस्था परिवर्तन मंच
173 बी, श्रीकृष्णपुरी, पटना 800001
टेलीफोन : 0612-2541276 / इमेल : rashtriyakayakalp@gmail.com

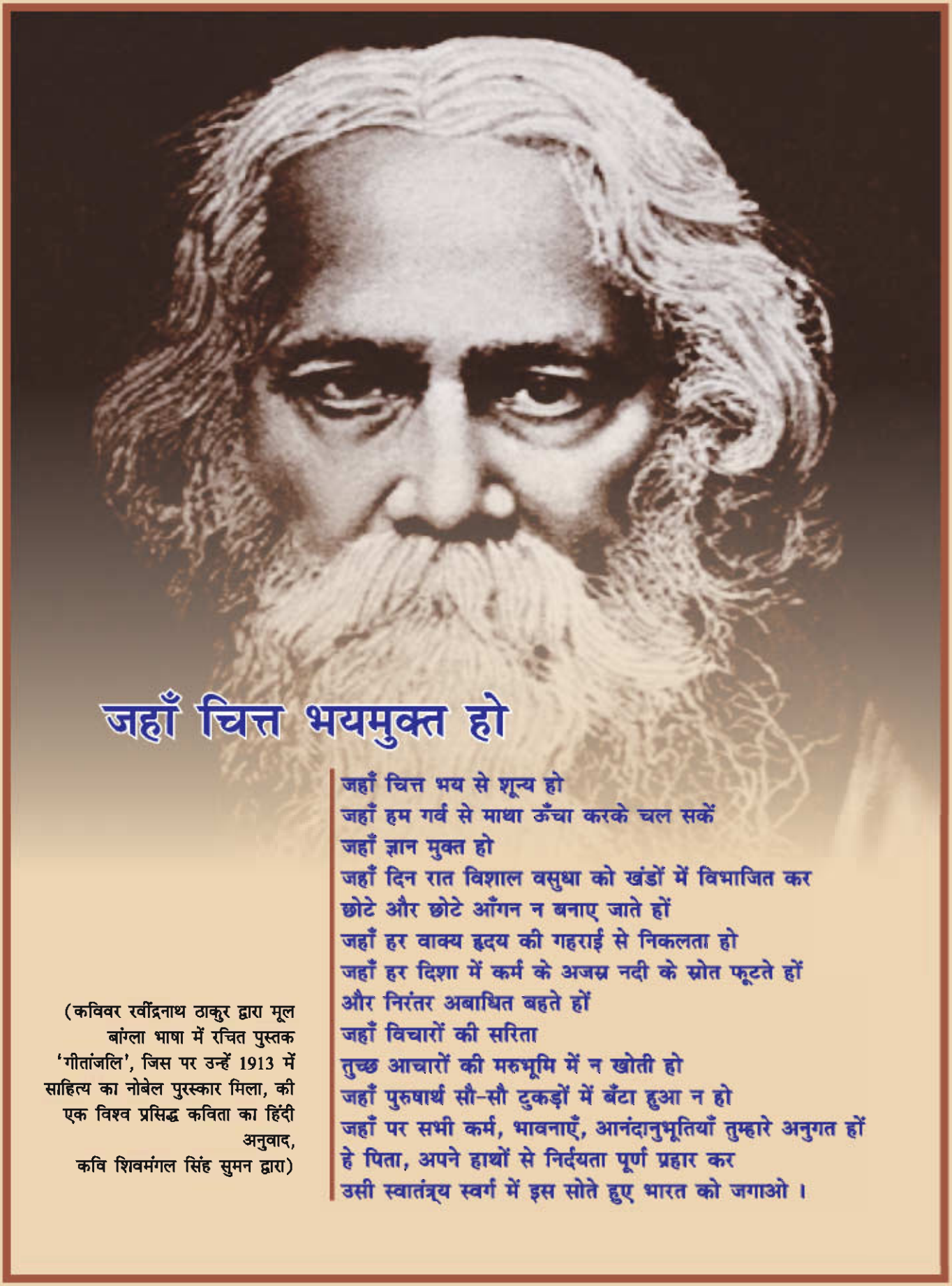

जहाँ चित्त भयमुक्त हो

जहाँ चित्त भय से शून्य हो
जहाँ हम गर्व से माथा ऊँचा करके चल सकें
जहाँ ज्ञान मुक्त हो
जहाँ दिन रात विशाल वसुधा को खंडों में विभाजित कर
छोटे और छोटे आँगन न बनाए जाते हों
जहाँ हर वाक्य हृदय की गहराई से निकलता हो
जहाँ हर दिशा में कर्म के अजस्र नदी के स्रोत फूटते हों
और निरंतर अबाधित बहते हों
जहाँ विचारों की सरिता
तुच्छ आचारों की मरुभूमि में न खोती हो
जहाँ पुरुषार्थ सौ-सौ टुकड़ों में बँटा हुआ न हो
जहाँ पर सभी कर्म, भावनाएँ, आनंदानुभूतियाँ तुम्हारे अनुगत हों
हे पिता, अपने हाथों से निर्दयता पूर्ण प्रहार कर
उसी स्वातंत्र्य स्वर्ग में इस सोते हुए भारत को जगाओ ।

(कविवर रवींद्रनाथ ठाकुर द्वारा मूल बांग्ला भाषा में रचित पुस्तक 'गीतांजलि', जिस पर उन्हें 1913 में साहित्य का नोबेल पुरस्कार मिला, की एक विश्व प्रसिद्ध कविता का हिंदी अनुवाद,
कवि शिवमंगल सिंह सुमन द्वारा)

भारत माँ अभी भी जंजीरों में

"सदियों से गुलामी की जंजीर में जकड़ी भारत माँ 1947 में इन जंजीरों से मुक्त नहीं हुई। ब्रिटिश संसद से पारित भारतीय स्वतंत्रता कानून 1947 के तहत सत्ता हस्तांतरण कर अंग्रेजों ने सिर्फ इस जंजीर में लगे हुए ताले की चाभी भारतीयों के हाथों में सौंप दी। इस चाभी से ताला खोलकर भारत माँ को इन जंजीरों से मुक्त करने के बजाय 1950 के 26 जनवरी को इस ताले को बदल कर नया ताला लगा कर मुक्ति का सिर्फ अहसास कर लिया गया। वह जंजीर बदस्तूर कायम रही। बल्कि समय के साथ इन जंजीरों में जंग लगने से जकड़ के साथ और विकृतियाँ उत्पन्न हो रही है। हमें भारत माँ को वास्तव में इन जंजीरों से मुक्त कराना है, जिससे भारत माँ के शरीर में रक्त का संचार ठीक से हो सके, विभिन्न रोगों से छुटकारा मिले और अंग प्रत्यंग पुष्ट हो। भारत में आधी-अधूरी और फलतः विकृत स्वतंत्रता के स्थान पर पूर्ण और स्वस्थ स्वतंत्रता का आविर्भाव करना है। जन-गण की संप्रभुता को संविधान के पन्नों से निःसृत होकर जन जीवन में लाना है। और इस सब के लिए शासन व्यवस्था में तदनुरूप परिवर्त्तन लाना अनिवार्य है।"